RNI REGD. NO.: DELHIN/2007/20953

मार्च 2015

कृषि मूलम् जगत सर्वम्

कृषि चौपाल

कृषि एवं ग्रामीण विकास को समर्पित हिन्दी मासिक पत्रिका ₹15

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश के खिलाफ संसद की चौखट पर चुनौती

बजट में कृषिक्षेत्र

किसान पर अब कुदरत की मार

बांस का कमाल

भारतीय कृषि का संकट काल

मनरेगा से जोड़ी जाए खेतिहर मजदूरी

दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना

अस्तित्व का सवाल

अनिवार्य हो गोबर व गोमूत्र का प्रबंधन

डेवलेपमेंट का बोझ ढोने को अभिशप्त आदिवासी

विदेशी बाजार में आयुर्वेद का कारोबार

हरी खाद : माटी की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने का सस्ता विकल्प

स्वाइन फ्लू : घबराएं नहीं, सजग रहें

जैविक खेती में रोजगार के अवसर

किसान की दशा बयान करती कहानी : सेंध

With best compliments from

D. S. Khatri
President

UTTARAKHAND CLUB (Regd.)

Regd. & Head Office:
Ch. Satvir House, 139B, 1st Floor, Mohammadpur,
Near Bhikaji Cama Place, New Delhi-110066, INDIA
Ph: 011-26175215, 9891955999
E-mail: uttarakhandclub@rediffmail.com Website: uttarakhandclub.com

THE LARGEST INTERNATIONAL SOCIAL ORGANIZATION OF UTTARAKHAND COMMUNITY

DILSHAD GARDEN
C/o Kishore Semwal
Gen. Secretary
Mob.: 9810420941
I-8, L.I.C. Colony,
Dilshad Garden, Delhi-110095
M.S. Rawat
President
Tel.: 011-22122622

MAYUR VIHAR
C/o S. S. Patwal
President
Mob.: 9868345225
30B, Pocket D-1, Kondli,
Mayur Vihar-3, Delhi-110096
R.C. Ghildiyal
Gen. Secretary
Mob.: 9818959902

SOUTH DELHI
C/o B.P. Puri
President
Mob.: 9868120602
A-182, Moti Bagh-1
New Delhi-110021
B.P. Mamgain
Gen. Secretary
Mob.: 9968260259

SANGAN VIHAR
C/o T.S. Phartiyal
Vice President
Mob.: 9312601581
G-1373, Sangam Vihar, Neer Veer
Bazar, New Delhi-110062

ROHINI
C/o K.S. Bisht
President
Mob.: 9811134984
Bisht Properties Pvt. Ltd.
Shop No-6, Mkt-4, Sector-2,
Rohini, Delhi-110085
Prem Rawat
Mob- 9811753279

MANDAWALI
C/o Prem Chandra Sharma
Gen. Secretaty
Mob/: 9868895142
B-1, Gali No-2, West Vinod Nagar,
Delhi-110092

M.P. Pandey
President
Mob.: 9811294744

DWARKA
C/o K.S. Gusain
President
Mob.: 9871292958
Flat No-116, Pocket-4, Sector-12,
Dwarka, New Delhi-110075

NOIDA
C/o Col. V.S Bisht
Presidend
Mob.: 9958595219
839, Sector-29, Arun Vihar,
Noida-201303

K.K. Joshi
Gen. Secretary
Mob- 9811289016

VASUNDHRA (GZB)
C/o B.S. Rawat
Gen. Secretary
Mob.: 9811721479
Sector-15/463, Vasundhra,
Ghaziabad (UP)

AMBEDKAR NAGAR
C/o Dr. B.D. Joshi
President
Mob.: 9868822265
Joshi Clinic, 1/17, Ambedkar Nagar,
New Delhi- 110062

Sunil Dutt Badoni
Gen. Secretaty
Mob.: 9811645410

PASCHIM VIHAR
C/o Tara Singh Kathayat
Mob.: 9868112610
BG-6/61-C, Paschim Vihar,
New Delhi-110063

Roshan Lal Riyal
Mob.: 9891682677

SHAHDARA
C/o Chandramanj Sharma
Mob.: 9013312896,
A-88 Gali No-4, Hardev Puri
Shahdara, Delhi-110096

AYA NAGAR
C/o Bhuvan Nailwal
President
Mob.: 9891938010
G-62E, Phase-6, Aya Nagar,
New Delhi

Girish Singh Adhikari
Gen. Secretary
Mob.: 9811828592

CHHATTARPUR
Varinder Singh Bertwal (Babbu),
President, Mob- 92666669616
B-6, Ambedkar Colony, Behind
Chhatarpur Mandir, New Delhi-
110074

NEW DELHI BRANCH
Prithvi Singh Kedarkhandi
President
Mob.: 9990099249
107, L-Type-3, Aaram Bagh,
Paharganj, New Delhi

INTERNATIONAL BRANCHES
Ganesh Chandra
Post Box NO-46821 Abu Dhabi-
U.A.E., Post Box No. 892, P.C.-114,
Sultanate of Oman

कृषि मूलम् जगत सर्वम्
कृषि चौपाल
कृषि एवं ग्रामीण विकास को समर्पित हिन्दी मासिक

वर्ष 1 ❖ अंक 3 ❖ मार्च 2015

संपादक
महेन्द्र सिंह बोरा

प्रबंध संपादक
एस. विश्वजीत प्रसाद

संयुक्त संपादक
गणेश चन्द्र पांडे

सहायक संपादक
खुशाल सिंह

डिजाइन
कल्पना प्रिंटोग्राफिक्स

मार्केटिंग
प्रवीन जुयाल
सुशील कुमार राय

डिस्ट्रीब्यूशन
दलीप जीना

संपादकीय कार्यालय
सी-355, तृतीय तल, गली नं. 9,
वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092

संपर्क: +91 9910406059,
9716407931, 9211915538
ईमेल: krishichaupal@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक महेन्द्र सिंह बोरा द्वारा सी-355, तृतीय तल, गली नं. 9, वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092 से प्रकाशित और मयंक ऑफसेट प्रोसेस, 794/95 गुरु रामदास नगर एक्सटेंशन, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092 से मुद्रित।

कृषि चौपाल में प्रकाशित लेख और विचार लेखकों के अपने हैं। जरूरी नहीं है कि हमारा दृष्टिकोण भी वही हो।
किसी भी तरह के विवाद का निपटारा दिल्ली/नई दिल्ली की सीमा में आने वाले सक्षम न्यायालयों और फोरमों में ही किया जाएगा।

उपरोक्त सभी पद अवैतनिक हैं।

किसान को उसका वाजिब हक चाहिए

विगत फरवरी माह में केंद्र सरकार ने संसद में दो बजट पेश किये -पहला रेल बजट और फिर आम बजट। साथ ही संसद में इस बीच कुछ विधेयक भी पेश हुए, लेकिन सबसे ज्यादा चर्चा रही भूमि अधिग्रहण अध्यादेश-2014 की। इस अध्यादेश की मुखालफत जहां एक ओर किसान संगठनों द्वारा की जा रही है वहीं अनेक राजनीतिक दल, जनपक्षधर संगठन भी इसका विरोध कर रहे हैं जिनमें अन्ना हजारे, मेधा पाटकर, पीवी राजगोपाल, पूर्व न्यायाधीश राजेंद्र सच्चर, वाइको, कविता कृष्णन, प्रशांत भूषण, अरविंद केजरीवाल आदि अनेक जाने-पहचाने नाम शामिल हैं।

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश का विरोध सड़क से लेकर संसद तक जारी है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सहित अनेक वरिष्ठ नेता भूमि अधिग्रहण अध्यादेश का विरोध करने वाले नेताओं और गैर राजनीतिक आंदोलनकारियों से बातचीत कर रहे हैं। अब सवाल पैदा होता है कि इस कानून को लेकर पहले ही आमराय क्यों नहीं बनायी गयी? भारत आज भी एक कृषिप्रधान देश है और हजारों वर्षों से यहां कृषि होती आयी है। आज भी 70 प्रतिशत ग्रामीण भारत कृषि पर आजीविका हेतु निर्भर है। यदि महाभारत को सिर्फ एक धार्मिक ग्रंथ न माना जाये तो महाभारत भी गंगा-यमुना के बीच की उपजाऊ जमीन पर वर्चस्व के लिये लड़ा गया होगा, यह बहुत हद तक निश्चित है। तो क्या हम यह मान लें कि सरकार और किसान फिर एक बार भूमि अधिग्रहण अध्यादेश को लेकर आर-पार की लड़ाई के लिये आमने-सामने होंगे! क्या एक कल्याणकारी राज्य में इस प्रकार के टकराव की बात सोची जा सकती है? क्या विकास का और कोई रास्ता नहीं है, जिसमें कि किसानों के हितों को सबसे कम क्षति पहुंचती हो? ये कुछ वे सवाल हैं जिनको हमारे रहनुमां भूमि अधिग्रहण पर कानून बनाते समय अनदेखा कर गये।

यह सच है कि आज हमें विकास चाहिये, हमें औद्योगिक प्रतिष्ठान चाहिये, हमें कृषि के अलावा अन्य वैकल्पिक रोजगार भी चाहिये। लेकिन यह भी उतना ही सच है कि यह सब हमें देश की 70 प्रतिशत रिआया को बर्बाद करके हासिल नहीं करना होगा। हमारे किसान भी प्रगति चाहते हैं। परंतु हमने एक आमधारणा बना ली है कि देश को अन्न देने वाले को दैन्य स्थिति में ही रहना होगा। भूमि अधिग्रहण अध्यादेश पर जो कुछ हो रहा है उससे लड़ाई अब असली और नकली किसानों की ओर जाती दिख रही है। लगभग मुद्दाविहीन हो चुकी भारतीय राजनीति में भूमि अधिग्रहण अध्यादेश के रूप में एक ऐसा मुद्दा आ गया है जो देश के 70 प्रतिशत लोगों से जुड़ा हुआ है। और इस मुद्दे को हर राजनीतिक, गैर राजनीतिक तथा अराजक तबका भुनाना चाहता है।

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश को लेकर समर्थन और विरोध में यह स्पष्ट नजर आ रहा है कि दोनों ही धड़ों ने हमारे किसानों की मनीषा और जागरूकता को काफी निचले स्तर पर आंका है। वे किसानों को एक 'वोट बैंक' मानकर चल रहे हैं और उनका 'गिनीपिग' की भांति इस्तेमाल करना चाहते हैं। यहां पर किसानों को सतर्क हो जाना चाहिये। भले ही भारत का किसान अकादमिक उपाधिधारक न हो, वह किसी सरकारी अलंकरण को भी धारण न करता हो, परंतु उसकी प्रज्ञा और जागृति को कम नहीं आंका जा सकता। उसका श्रमसाध्य जीवन उसको एक स्थितप्रज्ञ व्यावहारिक बुद्धि प्रदान करता है। वह प्रत्युत्पन्न मति होता है।

भारत के किसानों को भी विकास चाहिये, अच्छे अस्पताल चाहिये, अपने नौनिहालों के लिये अच्छे स्कूल चाहिये, तन ढंकने के लिये अच्छा कपड़ा चाहिये, परंतु उनसे इन सब पर बात कौन करेगा? उन्हें यह कौन समझायेगा कि यह कैसे संभव होगा। किसानों को जो भी चाहिये यह किसानों को स्वयं आगे आकर बताना होगा। उनको सरकार तक यह संदेश पहुंचाना होगा कि हम विकास में भागीदारी और श्रेय दोनों चाहते हैं। हम राष्ट्र को अन्न-धन और सीमाओं की सुरक्षा के लिये जवान आज तक देते आये हैं, और आगे भी देना जारी रखेंगे -परंतु अब हम इन सबका श्रेय भी लेंगे।

महेन्द्र सिंह बोरा
संपादक

@ चिट्ठी

'कृषि चौपाल' का फरवरी 2015 अंक पढ़ा। यह कृषि से जुड़े प्रसार कार्यकर्ता एवं किसानों एवं ग्रामीण जनसामान्य के लिए एक ज्ञानशाला है जिसका लाभ संबंधित लोग आसानी से उठा सकेंगे। मुझे इसकी अलग खासियत यह लगी कि इसकी भाषा सामान्य है एवं अधिक ग्राह्य है।

-बी.के. निगम
सहायक क्षेत्र प्रबंधक
इफको, फिरोजाबाद (उ.प्र.)

बहुत सुंदर। आपका यह प्रयास देश के किसानों को फायदा पहुंचाएगा।

-अर्जुन बिष्ट

बहुत सुंदर, सामाजिक और ज्ञानवर्द्धक है 'कृषि चौपाल'। आपको साधुवाद।

-श्रीधर द्विवेदी

आपकी पत्रिका पढ़कर प्रभावित हुआ। मैं भी इसके लिए एक लेख भेज रहा हूं।

-डॉ. प्रमोद मीणा
एसिसटेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
पाण्डिचेरी विश्वविद्यालय पुडुचेरी

बहुत सुंदर प्रकाशन है लेकिन पत्रिका को प्रसिद्धि दिलाने के लिए कृषि से जुड़े विभिन्न मसलों पर कुछ सीजनल लेख शामिल किये जा सकते हैं।

-बीआर चौधरी

सरोकारी मुद्दों को समेटे सार्थक पत्रिका है।

-शाह आलम

प्रतिष्ठित पत्रिका की सॉफ्ट कॉपी के लिए धन्यवाद। जो लोग गांवों में रहते हैं उनकी जमीनी हकीकत का सही संदेश पहुंचाने में यह पत्रिका सहयोग कर रही है। उत्साह बनाये रखें।

-मोहन दोतानिया

पत्रिका का अंक भेजने के लिए धन्यवाद। वाकई यह तमाम महत्वपूर्ण जानकारियों से युक्त एक अच्छा अंक है।

-दाताराम चमोली

बहुत सुंदर प्रयास है। आप कृषि की समस्याओं को उठाते रहें।

-अर्जुन बिष्ट

'कृषि चौपाल' में उत्तराखंड की कृषि और वानिकी के लिए भी स्थान देने का कष्ट करें।

-नरेन्द्र कठैत
पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

कृषि चौपाल कृषकों की भलाई के लिए है। उसमें किसी की बुराई नहीं करनी चाहिए। उसमें उनकी विफलताएं नहीं सफलताएं बतानी चाहिए। कमजोरियां नहीं मजबूतियां बतानी चाहिए। कृषि के प्रति सबके दिल में कृत्य-कृत्य की भावना उत्पन्न करनी चाहिए। ज्ञान-विज्ञान की झलक पानी चाहिए। निराशा नहीं आशा की झलक पानी चाहिए। कृषि विकास के सारे संदेश, आदेश, निर्देश का गहरा मिलन उसमें पाना चाहिए। यही आगे आशा करता हूं।

-डॉ. बी.आर. पाटील

आप यकीनन एक बेहतरीन पत्रिका निकाल रहे हैं। बधाई।

-सुधांशु गुप्ता

बहुत अच्छा प्रकाशन है। हमसे बांटने के लिए धन्यवाद।

-सरिता, जागोरी

उत्पाती बंदरों की फौज, कर रही मौज

अल्मोड़ा नगर में उत्पाती बंदरों और लंगूरों के खिलाफ वन विभाग द्वारा चलाये गये अभियान में बहुत सारे बंदरों को पकड़ा गया। परंतु यह अभियान जैसे ही थमा बंदरों और लंगूरों की संख्या में फिर से इजाफा हो गया। उत्पाती बंदर और लंगूर घरों में घुसकर सामान उठा ले जाते हैं और सब्जी तथा फलों की पैदावार को नष्ट कर देते हैं। अनेक कटखने बंदर तो बच्चों को तक काटखने को दौड़ते हैं। अनेक अभिभावकों ने बताया कि बच्चों को अकेले विद्यालय भेजना बड़ा मुश्किल हो गया है। मालूम हो कुछ माह पहले वन विभाग ने बाहर से टीम बुलाकर सैकड़ों बंदरों को पकड़कर दूर के जंगलों में छोड़ा था। लेकिन बंदरों का उत्पात कम नहीं हुआ।

नगर के रानीधारा, पोखरखाली, ढूंगाधारा, चीनाखान, धारनौला, राजपुरा, खत्याड़ी, सरकार की आली, नृसिंहबाड़ी आदि मुहल्लों में बंदरो का जबरदस्त आतंक बना हुआ है। बंदर छतों पर सुखाने के लिए डाले गए कपड़े फाड़ देते हैं। घरों के निकट स्थित खेतों से भी बंदर फल, सब्जी, मक्का आदि खा जाते हैं। ग्रामीण इलाकों में भी बंदरों का आतंक बना हुआ है। खेतों से फल, सब्जी आदि को उखाड़ कर नष्ट कर देते हैं। इससे काश्तकार परेशान हैं। कई बार तो बंदर बच्चों को घायल कर देते हैं। कई मोहल्लों में तो बच्चों का अकेले स्कूल जाना मुश्किल हो रहा है। बंदरों के बढ़ते आतंक के कारण कई मुहल्लों में बच्चों को अकेले स्कूल आने-जाने में खतरा बना रहता है।

केन्द्र सरकार को न्यायालय की नसीहत

बजट में किसानों को झटका दे चुकी केंद्र सरकार ने पिछले दिनों बाजरा और मक्का की खरीद के मामले में न्यूनतम समर्थन मूल्य तय नहीं कर सकने का बयान देते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि आने वाले दिन किसानों के लिये काफी चुनौतीपूर्ण होंगे। सरकार का मानना है कि इन कृषि उत्पादों की खरीद में सरकार को घाटा होता है। परंतु इस मामले पर पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को फटकारते हुए कहा है कि सरकार किसानों के हितों की अनदेखी नहीं कर सकती है। न्यायालय ने कहा कि किसान खेतों में फसल बोता है और इसके बाद सरकार का यह कर्तव्य है कि वह इसे किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य देकर खरीदे। पिछली सुनावाई में हाईकोर्ट में भारतीय किसान यूनियन के अध्यक्ष गुरनाम सिंह ने याचिका दाखिल करते हुए कहा था कि प्रदेश में गेहूं और चावल की न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीद नहीं हो रही है। इसके बाद एक अर्जी दाखिल करते हुए हरियाणा और पंजाब की मंडियों में खरीद के अभाव में पड़े मक्का व बाजरे की खरीद के लिए सरकार को निर्देश जारी करने की अपील की थी। इस अपील पर हाईकोर्ट ने हरियाणा और पंजाब सरकार से जवाब मांगा था। दोनों सरकार ने यह स्पष्ट किया था कि एमएसपी का निर्धारण केंद्र सरकार करती है। हाईकोर्ट ने इस पर केंद्र से जवाब मांगा था। उच्च न्यायालय में दाखिल अपने जवाब में केंद्र सरकार ने कहा कि मक्के और बाजरे की खरीद के लिए न एमएसपी तय किया जा सकता है और न गुणवत्ता की शर्तों में परिवर्तन। हाईकोर्ट ने कहा कि सरकार को फायदे नुकसान के साथ ही किसानों का हित भी देखना चाहिए। किसान लाभ की उम्मीद से फसल बोता है। यदि इस प्रकार से उसकी फसलों के साथ होगा तो स्थिति खराब हो सकती है।

उच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार के इस हलफनामे पर प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि केंद्र सरकार नए सिरे से एक हलफनामा दाखिल करे और इसमें किसानों के हित को भी ध्यान में रखा जाए। इस हलफनामे के माध्यम से केंद्र बताए कि किसानों के हित में वे क्या कर सकते हैं, ताकि उनका नुकसान न हो। साथ ही इन फसलों की आगे की खरीद को लेकर भी स्थिति स्पष्ट की जाए, ताकि किसानों को बेहतर लाभ मिल सके।

ग्रामीण चिकित्सालय दवाओं को तरसे

पंजाब में जिला परिषद के अधीन 1186 ग्रामीण चिकित्सालयों के लिए बजट में लगभग 10 करोड़ 67 लाख का प्रावधान था, लेकिन दवा केवल 1.92 करोड़ की सप्लाई की। दिसंबर 2014 के बाद कोई भी दवा सप्लाई नहीं की गई। यह बात हाईकोर्ट में दिए गए एक हलफनामे में सामने आई है।

एक जनहित याचिका की सुनवाई के दौरान पंजाब सरकार ने हाईकोर्ट में हलफनामा दायर कर बताया कि साल 2014-2015 के बजट के तहत जारी राशि से नवंबर के अंत तक इन चिकित्सालयों में 1.92 करोड़ रुपये की दवा सप्लाई की गई है। हाईकोर्ट ने पंजाब सरकार के इस जवाब पर कड़ा रूख अपनाते हुए पंजाब सरकार को दो सप्ताह में विस्तृत जवाब देकर यह बताने को कहा है कि वह दवा सप्लाई क्यों नहीं कर रही। बेंच ने पंजाब सरकार को यह भी निर्देश दिया है कि वह जिला परिषद अधीन 1186 ग्रामीण चिकित्सालयों में उचित दवाई उपलब्ध करवा कर दो सप्ताह के बीच स्टेटस रिपोर्ट दायर करे। जस्टिस एसके मित्तल की खंडपीठ ने हैरानी जताई कि ग्रामीण चिकित्सालयों में दवा कई मुफ्त सुविधाओं से महत्वपूर्ण है। वकील एचसी अरोड़ा ने जनहित याचिका दायर कर आरोप लगाया था कि पंजाब सरकार के रवैये के कारण ग्रामीण चिकित्सालय सफेद हाथी साबित हो रहे हैं। दवाओं की कमी से वहां तैनात स्टाफ को वेतन व्यर्थ जा रहा है।

जैविक खेती को प्रोत्साहन

मध्य प्रदेश सरकार ने जैविक खेती को बढ़ावा देने के मकसद से जैविक खेती करने वाले किसानों को पुरस्कृत करने का फैसला किया है। यह ऐलान राज्य के किसान-कल्याण तथा कृषि विकास मंत्री गौरीशंकर बिसेन ने मंगलवार को भोपाल में जैविक हाट में किया।

बिसेन ने कहा कि जैविक खेती की ओर लौटना वक्त की जरूरत है। इसके बिना स्वस्थ मानव, मृदा तथा स्वस्थ खाद्यान्न की परिकल्पना नहीं की जा सकती। आधुनिक खेती अपने मूल रूप से भिन्न है। भारत के कई प्रांतों ने आज जैविक खेती को अपना लिया है। जैविक खेती की कई विधाएं भी प्रचलित हैं। उन्होंने कहा कि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की मंशा खेती से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने की है।

जैविक उत्पाद विक्रय के लिए जैविक हाट लगाए जा रहे हैं। जबलपुर की मंडी को हाइटेक मंडी बनाया गया है। किसानों को जैविक उत्पाद की बिक्री के लिए बाहर नहीं जाना पड़ेगा, उन्हें यहीं बाजार उपलब्ध कराया जाएगा। जैविक खेती से रासायनिक खेती की तुलना में अधिक पैदावार होती है।

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश मोदी की हठधर्मिता: जयराम रमेश

लोकसभा में लैंड बिल पर होने वाली चर्चा से पहले कांग्रेस ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की आलोचना की है। कांग्रेसी नेता जयराम रमेश ने आरोप लगाया कि मोदी अमेरिका के अर्थशास्त्री की सलाह पर कॉर्पोरेट दुनिया को यह दिखा रहे हैं कि वे बड़े सुधार कर रहे हैं।

यूपीए सरकार में बने लैंड बिल को तैयार करने में अहम भूमिका निभाने वाले रमेश ने संसद सत्र के दौरान पीएम के विदेश दौरे पर जाने की भी आलोचना की। रमेश ने मोदी पर जानबूझकर लोकतांत्रिक संस्थानों के प्रति 'असम्मान' दिखाने के आरोप लगाए।

पीटीआई को दिए इंटरव्यू में पूर्व ग्रामीण विकास मंत्री रमेश ने बीजेपी के इस रुख का विरोध किया कि यूपीए के दौरान लागू किया गया लैंड बिल किसानों के हक में नहीं था। उन्होंने कहा कि 2013 का कानून काफी लोकतांत्रिक, काफी सलाह-मशविरा और काफी भागीदारी से बनाया गया था जबकि बीजेपी ने अध्यादेश लाकर तानाशाही, पूरी तरह उच्चस्तरीय एवं एकतरफा तरीके से इसे बनाया। उन्होंने दावा किया कि यहां तक कि ग्रामीण विकास मंत्री को अंधेरे में रखा गया। अध्यादेश को तैयार करने और कैबिनेट की मंजूरी हासिल करने में केवल दो घंटे का वक्त लगा। कोई चर्चा नहीं हुई।

रमेश ने सरकार पर लैंड बिल में किसानों की सहमति प्राप्त करने और सामाजिक प्रभाव का आकलन करने को खत्म करने का आरोप लगाते हुए कहा कि यह बाजार और कारपोरेट सेक्टर को दिखाने का संकेत है कि वे बड़े आर्थिक सुधार कर रहे हैं।

रमेश ने कहा, मोदी के सभी आर्थिक सलाहकार (अरविंद पांगरिया, अरविंद सुब्रमण्यम) कहते रहे हैं कि इस कानून को बदला जाना चाहिए। यह बड़ी लॉबी है। वे लंबे समय से इस बारे में लिखते रहे हैं, वे अमेरिका से आए हैं और अमेरिका चले जाएंगे। उन्होंने कहा कि कानून चार स्तंभों - मुआवजा और पुनर्वास और भूमि मालिकों की सहमति तथा सामाजिक प्रभाव आकलन पर आधारित था। उन्होंने कहा कि इसके दो स्तंभ सहमति और सामाजिक प्रभाव आकलन को पूरी तरह खत्म कर दिया गया।

संसद सत्र के दौरान प्रधानमंत्री के विदेश दौरे की आलोचना करते हुए रमेश ने कहा कि यह जानबूझकर किया गया है कि वह संसद को संदेश दे रहे हैं कि आप जो चाहें कर सकते हैं लेकिन मैं वहीं करुंगा जो मैं चाहता हूं। वह केवल संसद सत्र के दौरान यात्राएं करते हैं। गौरतलब है कि प्रधानमंत्री मोदी 10 मार्च को तीन देशों - सेशेल्स, मॉरिशस और श्रीलंका के दौरे पर जा रहे हैं।

गुजरात के कृषि विभाग ने आज कहा कि राज्य में विगत चार वर्षों में 89 किसानों ने आत्महत्या की। साथ ही दावा किया कि किसी भी मामले में आत्महत्या जैसा कदम उठाने के पीछे फसल का बर्बाद होना कारण नहीं था।

कृषि मंत्री बाबू बोखिरिया ने राज्य विधानसभा में एक सवाल के लिखित जवाब में कहा, राज्य में 2010 से 31 जुलाई 2014 के बीच 89 किसानों ने आत्महत्या की है जबकि उनमें से किसी ने भी फसल बर्बाद होने के कारण आत्महत्या नहीं की।

कृषि विभाग ने फसल के बर्बाद होने, कृषि कर्ज के बढ़ जाने, कर्ज के बढ़ जाने और अन्य कारणों समेत किसानों के आत्महत्या के संबंध में कारणों की चार श्रेणियां बनाई हैं।

आत्महत्या की वजह कर्ज नहीं: बाबू बोखिरिया

उन्होंने अपने जवाब में कहा कि 78 किसानों ने अन्य कारणों की वजह से आत्महत्या की जबकि सिर्फ आठ किसानों ने कर्ज बढ़ जाने की वजह से यह कदम उठाया। उन्होंने कहा कि सिर्फ तीन किसानों ने कृषि ऋण के बढ़ जाने की वजह से आत्महत्या की जबकि उनमें से किसी ने भी फसल बर्बाद होने के कारण आत्महत्या नहीं की।

कांग्रेस विधायक तेजश्री पटेल के एक सवाल के जवाब में राज्य सरकार की ओर से आज जारी आंकड़ों के अनुसार राज्य के सौराष्ट्र क्षेत्र में किसानों की सबसे खराब दशा है क्योंकि आत्महत्या की अधिकतम घटनाएं वहां से रिपोर्ट हुई हैं।

सौराष्ट्र के जामनगर जिले में अधिकतम 46 किसानों ने आत्महत्या की। दो अन्य जिलों सौराष्ट्र, जूनागढ़ में 14-14 और अमरेली में सात किसानों ने विगत चार वर्षों में आत्महत्या की।

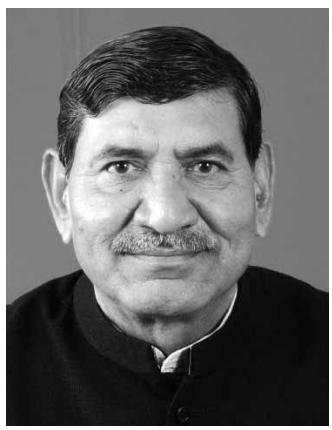

किसानों की आत्महत्या में महाराष्ट्र सबसे ऊपर

कृषि राज्य मंत्री मोहन भाई कुंदारिया ने लोकसभा में एक सवाल का जवाब देते हुए बताया कि 2014 में सूखा पड़ने, फसल बर्बाद होने और कर्ज से तंग आकर 1109 किसानों ने आत्महत्या की। इसमें सबसे ज्यादा आत्महत्याएं महाराष्ट्र में की गयी। जहां विभिन्न कारणों से 986 किसानों ने मौत को गले लगाया। इसके बाद दूसरे नंबर पर तेलंगाना और तीसरे नंबर पर झारखंड है।

खाकर पोस्त तोते मस्त

राजस्थान के चित्तौड़गढ़ जिले में अफीम की खेती कर रहे किसानों को एक खास तरह की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। अफीम की फसलों की कटाई के बाद उससे विशेष प्रकार का दुधिया तरल पदार्थ निकलता है, जिसे चूसने के लिए बड़ी संख्या में तोते खेतों में आते हैं।

अफीम की खेती करने वाले सुकवारा गांव के एक किसान किशोर कुमार धकेर ने बताया, तरल को चूसने के बाद वे पेड़ों पर बैठ जाते हैं और घंटों वहां सोए रहते हैं। कई पक्षियों को झुंड में चक्कर लगाते देखा जाता है और अत्यधिक अफीम का सेवन कर लेने के कारण वे पेड़ों से गिर भी जाते हैं। कई तोते तो नीचे मृत भी पाए गए हैं, कुछ को अन्य पक्षी मार देते हैं। इलाके में और भी प्रजाति के पक्षी हैं, लेकिन लगता है कि तोते नशीली चीजों की तरु ज्यादा आकर्षित होते हैं।

लोगों को हालांकि, इसकी वजह पता नहीं है। किसान इनसे परेशान हैं, क्योंकि पक्षियों की इन आदतों से उनका लाभ प्रभावित हो रहा है। इसके अतिरिक्त नार्कोटिक्स विभाग के अधिकारी उत्पादन में कमी को लेकर उनकी दलील को शक की निगाह से देखते हैं। उनको दिए गए लाइसेंस के आधार पर अगर उत्पादन कम हुआ तो भविष्य में किसानों को परमिट नहीं मिलेगा।

किसानों का कहना है कि तोते को डराने के लिए एहतियाती कदम उठाए जाते हैं, फिर भी उनकी फसलों का पांच से सात फीसदी अंश तोते खा जाते हैं। सुकवारा गांव के एक अन्य किसान ने कहा कि इन तोते को नियंत्रित करना मुश्किल है। उन्हें भगाने के लिए हमें घंटों खेतों में रहना पड़ता है। कुछ किसान खेतों को ढकने के लिए जाल का इस्तेमाल करते हैं, कुछ टीन बजाते हैं, तो कुछ गुलेल रखते हैं। अफीम की खेती राज्य के चित्तौड़गढ़, बारन, झालवार, उदयपुर और भीलवाड़ा में मार्च में होती है।

हटाये गये तमिलनाडु के कृषिमंत्री एसएस कृष्णमूर्ति

तमिलनाडु के मुख्यमंत्री ओ. पन्नीरसेल्वम ने कृषि मंत्री एस.एस. कृष्णमूर्ति को मंत्री परिषद से हटा दिया है। राजभवन से जारी एक बयान के अनुसार, राज्यपाल के.रोसैया ने कृष्णमूर्ति को मंत्री परिषद से हटाने की पन्नीरसेल्वम की सिफारिश को स्वीकार कर लिया है। कृषि मंत्रालय की जिम्मेदारी अब आर. वैथियालिंगम को दी गई है, जो आवास और शहरी विकास मंत्री हैं। पिछले महीने कृषि विभाग के इंजीनियर मुथुकुमारस्वामी की आत्महत्या के बाद राजनीतिक मांग को देखते हुए कृष्णमूर्ति को मंत्रालय से हटाया गया है।

कृष्णमूर्ति के कार्यालय के कर्मचारियों पर यह आरोप है कि वे मुथुकुमारस्वामी पर कुछ लोगों को विभाग में चालक के रूप में नियुक्त करने का दबाव बना रहे थे। विभिन्न रिपोर्टों के अनुसार, हालांकि नियुक्तियां इम्प्लायमेंट एक्सचेंज में वरिष्ठता की सूची के आधार पर हुई थीं।

पटाली मक्कल काची (पीएमके) के संस्थापक एस.रामादौस ने मुथुकुमारस्वामी पर आत्महत्या का दबाव बनाने को लेकर कृष्णमूर्ति के खिलाफ मामला दर्ज कराने और उन्हें गिरफ्तार करने की मांग की थी। उन्होंने भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस) कैडर के एक अधिकारी द्वारा जांच कराए जाने की भी मांग की थी और तमिलनाडु के मंत्रियों के खिलाफ कार्रवाई की मांग की थी। पन्नीरसेल्वम ने पिछले साल कार्यभार संभालने के बाद पहली बार अपने मंत्री परिषद से किसी को हटाया है।

स्वैच्छिक सेवा संगठनों पर लटकी सरकार की तलवार

विदेशों से धन लेने के मामले में 61 गैर सरकारी संगठनों को काली सूची में डाल दिया गया है। गृह राज्य मंत्री किरन रिजिजू ने लोकसभा को बताया कि इन संगठनों पर विदेश से धन लेने पर प्रतिबंध लगाया गया है। इसमें आंध्र प्रदेश के 14, तमिलनाडु के 12, गुजरात और उड़ीसा के पांच-पांच तथा उत्तर प्रदेश और जम्मू-कश्मीर के चार-चार तथा दिल्ली के तीन गैर सरकारी स्वैच्छिक सेवा संगठन शामिल हैं।

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश के खिलाफ

संसद की चौखट पर चुनौती

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश को लेकर गत् 24 फरवरी को देशभर के अनेक किसान संगठनों तथा जनपक्षधर संगठनों ने भारत की संसद की चौखट जंतर–मंतर पर जबर्दस्त विरोध प्रदर्शन कर अपना रोष जाहिर किया। भूमि अधिग्रहण अध्यादेश–2014 वर्तमान में भाजपानीत राजग सरकार के लिये सबसे ज्यादा चुनौती बना हुआ है। इस अध्यादेश को लेकर वर्तमान में जो बहस संसद से सड़क तक चल रही है, उसमें राजनीति स्पष्ट नजर आती है।

महेन्द्र बोरा

यहां कुछ कहने से पहले भूमि अधिग्रहण अध्यादेश पर विश्लेषण करने से पहले भारत में भूमि अधिग्रहण की शुरुआत और इतिहास पर एक नजर डाल लेना समीचीन होगा। भारत में अंग्रेजों के शासन से पहले भी भूमि अधिग्रहण के प्रमाण प्राप्त होते हैं परंतु उसका स्वरूप कुछ अलहदा हुआ करता था। राजतंत्रों के युग में संदर्भित राज्य के राजा का अपने राज्य की भूमि और संपत्ति पर सार्वभौमिक तथा अंतिम अधिकार हुआ करता था। बाद में भारत जब अंग्रेजों की गुलामी में आया तो ब्रिटिश संसद ने सर्वप्रथम 1894 में भूमि अधिग्रहण कानून बनाया। इस कानून को बदलने का प्रयास लगभग 105 वर्ष बाद सबसे पहले पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी की सरकार के दौरान एक प्रस्ताव लाकर किया गया। परंतु तब मामला सिर्फ प्रस्ताव लाने तक ही सीमित रहा। अनेक किसान संगठनों और जनपक्षधर संगठनों के लंबे संघर्ष के बाद गत् वर्ष 2013 में इस कानून को थोड़ा बहुत परिवर्तित किया जा सका। 119 वर्षों बाद अंशत: परिवर्तित किया गया यह कानून मौजूदा राजग सरकार द्वारा पिछले वर्ष दिसंबर माह में एक अध्यादेश के द्वारा पुन: बदल दिया गया।

इससे पूर्व 2007 में भी भू-अर्जन से जुड़े दो विधेयक संसद में पेश किये गये परंतु तब यह पारित नहीं हो पाये। भूमि अधिग्रहण अध्यादेश से पूर्व जो विधेयक पारित किया गया, उसका

मसौदा जुलाई 2011 में तत्कालीन केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश की अगुआई में तैयार किया गया था। 2012 में भूमि अधिग्रहण के लिये समुचित मुआवजा राशि और पुनर्वास विधेयक लोकसभा में पेश किया गया था। यहां पर यह तथ्य भी स्मरणीय है कि पूर्व पारित तत्संबंधी विधेयक में 157 संशोधन किये गये थे और इन संशोधनों के लिये भाजपा सहित अन्य दलों ने भी प्रस्ताव दिये, जिनमें से अधिकांश को स्वीकार कर लिया गया। यहां पर यह भी ध्यान देने वाली बात है कि विधेयक के पारित होने के बाद भाजपा नेत्री तथा मौजूदा लोकसभा स्पीकर सुमित्रा महाजन ने तब यह कहा था कि भाजपा के सहयोग के बिना यह विधेयक पारित हो ही नहीं सकता था। और तब भाजपा ने इस विधेयक को पारित करवाने में अपने समर्थन की बिना पर खूब वाहवाही बटोरी थी और बाद में इस बात का अपने चुनाव प्रचार अभियान में भी खूब जोर-शोर से प्रचार किया।

पूर्व पारित विधेयक को सबसे पहले जिस राज्य में लागू किया गया वहां भी भाजपा की ही सरकार थी और मुख्यमंत्री थे स्व. गोपीनाथ मुण्डे। बाद में श्री मुण्डे का अचानक देहान्त हो गया, जिसको लेकर आज भी रहस्य और संदेह बरकरार है।

लेकिन 2014 में भाजपा जब पूर्ण बहुमत से केंद्र में पदारूढ़ हुई तो अचानक उसे ख्याल आया कि 119 सालों की लंबी लड़ाई के बाद

'मैं अब अनशन नहीं करूंगा। अनशन करके मुझे अभी मरना नहीं है। मुझे जिंदा रहना है। मुझे किसानों के हित के लिए लड़ना है।'

जो भूमि अधिग्रहण विधेयक बदला गया है उसे फिर बदलने की आवश्यकता है। और 31 दिसंबर 2014 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सरकार ने अपने मंत्रिमंडल की बैठक के माध्यम से पूर्व पारित विधेयक को पलटते हुए भूमि अधिग्रहण अध्योदश-2014 के रूप में लागू कर दिया। इस अध्यादेश को लेकर किसानों और तमाम जनपक्षधर संगठनों में व्याप्त असंतोष पर आगे कुछ कहने से पहले पूर्व पारित विधेयक तथा मौजूदा भूमि अधिग्रहण अध्यादेश पर तुलनात्मक दृष्टिपात करना उचित होगा, जिसे आगे एक तालिका में समझाया गया है।

इस तुलानात्मक अध्ययन से यह भी स्पष्ट हो गया है कि यदि अधिग्रहीत की गयी भूमि का मुआवजा सरकार द्वारा राजकोष में जमा करा दिया जाता है तो अधिग्रहण मान लिया जायेगा। मतलब साफ है कि भू-स्वामी या किसान मुआवजा थामे या ना थामे उसकी जमीन हर हाल में हथिया ली जायेगी।

इस अध्यादेश के मामले में एक तथ्य यह भी विचारणीय है कि भारत की 75 प्रतिशत आबादी पूर्णत: ग्रामीण है और इस अध्यादेश से इस 75 प्रतिशत आबादी की 65 प्रतिशत कृषि भूमि प्रभावित होने का अंदेशा है। इसके बावजूद भी भारत के धनकुबेरों को यह ऐतराज है कि वर्तमान में भूमि अधिग्रहण प्रक्रिया काफी धीमी हो गयी है और मुआवजे के नये नियमों से परियोजनाओं की लागत में बढ़ोत्तरी हो रही है। उनकी राय है कि नये कानून के दायरे से पिछले पांच सालों में अधिग्रहीत की गयी उस भूमि को बाहर रखा जाय जहां कि अभी तक मुआवजा बांटा नहीं गया है।

सहयोगियों ने भी दिखाये तल्ख तेवर

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश के विरोध में राष्ट्रीय

मोदी सरकार द्वारा लागू अध्यादेश तथा पूर्व यूपीए सरकार द्वारा पारित विधेयक में अंतर

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश-2014	भूमि अधिग्रहण विधेयक-2013
1. भूमि अधिग्रहण के मामले को लेकर पीड़ित किसान बिना अनुमति के अदालत नहीं जा सकेंगे।	1. पीड़ित किसान भूमि अधिग्रहण के मामले में अदालत से न्याय की गुहार लगा सकते हैं।
2. पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप (पीपीपी), सस्ते घरों, ग्रामीण क्षेत्र की योजनाओं, रक्षा परियोजनाओं और औद्योगिक कॉरीडोर के लिये अधिग्रहीत की जाने वाली भूमि के लिये भू-स्वामी, किसान की सहमति आवश्यक नहीं होगी।	2. निजी परियोजनाओं हेतु तथा पीपीपी परियोजनाओं के लिये क्रमश: 80 फीसद तथा 70 फीसद भू-स्वामियों और किसानों की सहमति आवश्यक होगी।
3. राष्ट्रीय सुरक्षा, ग्रामीण क्षेत्र की परियोजनाओं, रक्षा परियोजनाओं, और औद्योगिक कॉरीडोर के लिये सामाजिक प्रभाव के अध्ययन की आवश्यकता नहीं होगी।	3. प्रत्येक बार भूमि अधिग्रहण से पहले अधिग्रहण के सामाजिक प्रभाव का आकलन आवश्यक होगा।
4. रेलवे, स्पेशल इकॉनोमिक जोन, परमाणु ऊर्जा आदि सहित कुल 13 कानूनों को इसके अंतर्गत शामिल करते हुए पुनर्वास तथा मुआवजे के लाभ के दायरे में शामिल किया गया है।	4. परमाणु ऊर्जा, रेलवे, स्पेशल इकॉनोमिक जोन सहित कुल 16 कानूनों के अंतर्गत किये जाने वाले अधिग्रहण को इस विधेयक के तहत रखा गया था।
5. अधिग्रहण के उपरांत परियोजना प्रारंभ करने की कोई समय सीमा नहीं रखी गयी है।	5. अधिग्रहीत भूमि पर यदि पांच वर्ष तक परियोजना शुरू नहीं होती है तो अधिग्रहीत जमीन मूल मालिक को वापस होगी।
6. रक्षा योजनाओं, ग्रामीण विकास की परियोजनाओं, राष्ट्रीय सुरक्षा योजनाओं के लिये उपजाऊ कृषि भूमि का अधिग्रहण भी संभव कर दिया गया है।	6. उपजाऊ तथा बहुफसली कृषि भूमि का खास परिस्थितियों में अधिग्रहण संभव हो सकेगा।
7. मुआवजे के प्रावधानों में कोई बदलाव नहीं किया गया है।	7. मुआवजे के मामले में ग्रामीण भूमि का चार गुना तथा शहरी भूमि का दो गुना मुआवजा निर्धारित किया गया।
8. भूमि अधिग्रहण के मामले में संबंधित अधिकारी पर कार्रवाई को प्रतिबंधित कर दिया गया है।	8. नियम विरुद्ध अधिग्रहण करने वाले अधिकारियों पर कार्रवाई का प्रावधान किया गया है।
9. मुआवजा नहीं लेने की स्थिति में यदि सरकार राजकोष में मुआवजा जमा करवा देती है तो भी भूमि अधिग्रहीत कर ली जायेगी।	9. यदि किसान मुआवजा प्राप्त नहीं कर लेता है तो अधिग्रहण संभव नहीं होगा।

स्वयं सेवक संघ के एक धड़े की स्वीकृति भी सूत्रों द्वारा बतायी जाती है। राजग का ही एक सहयोगी संगठन शेतकारी कामगार संगठन भी इस अध्यादेश की खिलाफत कर रहा है। शेतकारी कामगार संगठन के सांसद नेता राजू शेट्टी ने लोकसभा में भूमि अधिग्रहण विधयेक का खुलकर विरोध किया। भूमि अधिग्रहण पर मौजूदा सरकार को संसद के अंदर और बाहर भारी विरोध का सामना करना पड़ रहा है। दूसरी ओर संसदीय कार्यमंत्री वैंकया नायडू का कहना है कि अनेक प्रांतों और केंद्रशासित प्रदेशों ने केंद्र को ज्ञापन देकर संशोधन करने की मांग की थी। संशोधन की मांग करने वाले राज्यों का कहना है कि पिछले भूमि अधिग्रहण कानून के कारण विकास कार्य मुश्किल हो गये हैं।

भाजपा के ही सहयोगियों ने अब भूमि अधिग्रहण पर सतर्कता के साथ आगे बढ़ने का सुझाव भाजपा को दिया है। भाजपा के ही एक अन्य चिर सहयोगी शिवसेना ने तो राजग द्वारा इस मसले पर आहूत बैठक का विरोध करते हुए स्पष्ट कर दिया है कि भूमि अधिग्रहण विधेयक का वह मौजूदा स्वरूप में समर्थन नहीं करेगी। शिवसेना ने सरकार को नसीहत दी है कि वह इस मामले में हर मसले पर सदन के भीतर अपना पक्ष साफ-साफ रखे। शिवसेना सुप्रीमो उद्धव ठाकरे ने तो यहां तक कह दिया है कि किसानों के अहित में कोई भी कानून बर्दाश्त नहीं किया जायेगा।

केंद्र में सरकार के सहयोगियों का कहना है कि इस कानून का जो विरोध हो रहा है उसके मद्देनजर सरकार को काफी संभलकर इस मसले पर आगे बढ़ने की रणनीति बनानी होगी। जल्दबाजी करने पर सरकार की छवि को भी नुकसान हो सकता है। इस विधेयक को कानून का स्वरूप देने से पहले निचले पायदान तक यह संदेश दिया जाना जरुरी है कि इस कानून में किसानों का अहित करने वाले प्रावधानों को शामिल नहीं किया जायेगा। उसके सहयोगियों का कहना है कि इस मसले पर थोड़ा सी भी असावधानी जहां एक ओर विपक्षियों को एक मुद्दा बैठे-बिठाये उपलब्ध करा देगी वहीं दूसरी ओर भाजपा और उसके सहयोगी दलों को राजनीतिक नुकसान होने का पूरा अंदेशा है। शिवसेना और शेतकारी संगठन के अलावा अकाली दल, लोक जनशक्ति पार्टी, राष्ट्रीय लोकदल और सपा ने भी सरकार की छवि और इस अधिग्रहण कानून के संदेश को लेकर चेतावनी के लहजे में सुझाव दिये हैं।

विरोध के स्वर

तृणमूल कांग्रेस सुप्रीमो तथा पश्चिम बंगाल की

मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने मौजूदा भूमि अधिग्रहण कानून को तुरंत वापस लेने की मांग करते हुए इसे किसानों के लिये बहुत कठोर कानून करार दिया है। सुश्री बनर्जी ने कहा है कि बिना आम सहमति बनाये इतने व्यापक विधयेक को संसद में पेश करना मोदी सरकार की हठधर्मिता को दर्शाता है। उन्होंने कहा कि यह विधेयक किसानों को दीर्घकालिक क्षति पहुंचाएगा। सुश्री बनर्जी ने कहा कि हम सशक्त भूमि अधिग्रहण का हमेशा विरोध करते आये हैं और आज भी इसका विरोध करते हैं।

दिल्ली के मुख्यमंत्री और आप सुप्रीमो अरविंद केजरीवाल ने मोदी सरकार के भूमि अधिग्रहण कानून को लेकर काफी तल्ख बयानी की है। श्री केजरीवाल ने कहा कि मोदी सरकार इस कानून के जरिये भारत और भारत से बाहर के पूंजीपतियों के लिये प्रॉपर्टी डीलर जैसी भूमिका निभा रही है। उन्होंने गत 24 फरवरी को जंतर-मंतर पर इस कानून के खिलाफ आयोजित विरोध प्रदर्शन में अन्ना के साथ भागीदारी करते हुए यह वादा किया कि वे अन्ना के आंदोलन में सदा सहयोग करेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि वह दिल्ली में जबर्दस्ती भूमि अधिग्रहण नहीं होने देंगे। उन्होंने भाजपानीत एनडीए सरकार को किसान विरोधी और आम आदमी विरोधी करार देते हुए कहा कि इस मामले में भाजपा ने कांग्रेस को भी काफी पीछे छोड़ दिया है। केजरीवाल का कहना था कि कांग्रेस द्वारा भी ऐसा ही प्रयास किया गया और आज परिणाम सभी के सामने है कि जनता ने उसे नकार दिया। और अब जनता ही इस सरकार को भी सबक सिखायेगी। उन्होंने कहा कि कांग्रेस से आजिज आकर लोगों ने भाजपा को चुना और भाजपानीत सरकार वादे करने के अलावा और कुछ नहीं कर रही है। श्री केजरीवाल ने कहा कि अभी हाल ही में संपन्न दिल्ली विधानसभा चुनावों में जनता ने भाजपा को भी नकार कर इसके संकेत दे दिये हैं।

हालांकि जब अरविंद केजरीवाल इस विरोध प्रदर्शन में अपना समर्थन देने के लिये जंतर-मंतर पर पहुंचे तो उन्हें लगभग 30 मिनट तक मंच से नीचे ही बैठकर संतोष करना पड़ा। आज से लगभग चार साल पूर्व अन्ना हजारे के मंच से ही अपने राजनीतिक जीवन के सफर की शुरुआत करने वाले श्री केजरीवाल को अन्ना के मंच तक पहुंचने के लिये काफी इंतजार करना पड़ा। वह जब संसद मार्ग पर धरना स्थल पर बने मंच पर जाना चाहते थे तो उन्हें जयहिंद संस्था के कार्यकर्त्ताओं ने मंच पर चढ़ने से रोक दिया जबकि उस वक्त उनके साथ उपमुख्यमंत्री मनीष सिसोदिया तथा अन्य पार्टी विधायक भी थे। परंतु मौके पर मौजूद जनपक्षधर आंदोलनों की जानी-मानी शख्सियत मेधा पाटकर के हस्तक्षेप के बाद केजरीवाल को अकेले ही मंच पर जाने की अनुमति दे दी गयी और वह सीधा अन्ना के बगल में जाकर बैठ गये, जबकि सिसोदिया तथा अन्य विधायक भीड़ का हिस्सा बने रहे। परंतु केजरीवाल के मंच पर पहुंचते ही प्रशांत भूषण, राजेंद्र सिंह, अतुल अंजान, कविता कृष्णन वहां से रुखसत हो गये। जाहिर है कि इसके बाद धरना-प्रदर्शन स्थल पर चर्चाओं का बाजार गर्म हो गया और कयास लगाये जाने लगे कि वे सभी लोग केजरीवाल के मंच पर आने से खफा होकर चले गये हैं। परंतु बाद में सफाई में यह भी कहा गया कि इस तरह का कोई मामला नहीं है। मंच से उठकर जाने वाले नेता सत्याग्रहियों की यात्रा की अगवानी के लिये मथुरा रोड की ओर गये हैं।

दूसरी तरफ शाम को एकता परिषद् के अध्यक्ष पीवी राजगोपाल ने भूमि अधिग्रहण कानून का विरोध करने के लिये भूमि अधिकार सत्याग्रह पदयात्रा के जरिये जंतर-मंतर पहुंचकर यह दिखा दिया कि वह एक अच्छे जनपक्षधर नेता होने के साथ-साथ एक अनुशासित संगठन निर्माता भी हैं। अपनी-अपनी भाषा के गीत और जनगीत गाते, ढोल बजाते तथा नाचते हुए हजारों भूमि अधिकार सत्याग्रह पदयात्री दिल्ली के सरिता विहार स्थित जिला पार्क से जंतर-मंतर

की ओर रवाना हुए। गौरतलब है कि यह पदयात्रा 24 फरवरी को जब जंतर-मंतर की ओर कूच कर रही थी तब इस पदयात्रा का आठवां दिन था। पदयात्रा में शामिल लोगों का अनुशासन और उत्साह देखते ही बनता था। कोई नहीं कह सकता था कि ये सत्याग्रही प्रतिदिन सिर्फ एक समय खाना खाकर लगातार आठ दिनों से पैदल चलते हुए धरना-प्रदर्शन स्थल तक पहुंचे हैं। इस पदयात्रा को हालांकि 6 बजे से पहले जंतर-मंतर पर पहुंचना था, परंतु पदयात्री दिल्ली में अनेक स्थानों पर पुलिस-प्रशासन द्वारा रोके गये जिससे उन्हें विरोध प्रदर्शन स्थल तक पहुंचते में विलंब हुआ। पदयात्रा को पुलिस-प्रशासन द्वारा रोके जाने तथा देरी से जंतर-मंतर पहुंचने के चलते अन्ना स्वयं पदयात्रा में शामिल होने मंच छोड़कर निकल पड़े। साथ में उनके अनेक सहयोगी भी चल दिये। शाम को करीब छह बजे पदयात्रा जंतर-मंतर पहुंची।

पदयात्री दो कतारों में चल रहे थे ताकि सड़क पर यातायात भी सुचारू रूप से चलता रहे। एक कतार महिलाओं की तो दूसरी पुरुषों की थी। पदयात्रियों का जोश बढ़ाने व मनोरंजन करने के लिए मनोरंजन टोली भी साथ में चल रही थी। जो बीच-बीच में अपने लोक नृत्य से पदयात्रियों का मनोरंजन कर रही थी। पदयात्रा सरिता विहार, ओखला मोड़ चौराहा, न्यू फ्रैंड्स कालोनी, सीआईआरआर चौराहा होते हुए आश्रम चौक पहुंची। फिर किलोकरी, भोगल होते हुए मध्यान्ह बजे निजामुद्दीन दरगाह के पास पहुंची जहां सड़क पर बैठकर पदयात्रियों ने आराम किया। यहां पर उनके नेताओं ने उन्हें कुछ देर संबोधित भी किया। यहां पीवी राजगोपाल, गोविंदाचार्य, आरिफ मोहम्मद खान, स्वामी अग्निवेश आदि मौजूद रहे। उन्होंने लोगों का उत्साह बढ़ाया। कुछ पदयात्री थकान के कारण सड़क पर ही सो गए। इसके बाद ओबेराय होटल, सुंदरनगर, चिड़ियाघर होते हुए अपरान्ह में पदयात्रा हाई कोर्ट के सामने पहुंची। जहां पुलिस ने उन्हें रोक लिया और आगे जाने से मना कर दिया। हाई कोर्ट के सामने भारी संख्या में पुलिस बल मौजूद था। बैरिकेड लगाकर यहां पदयात्रियों को रोक दिया गया। पदयात्री सड़क पर बैठकर गीत गाने लगे व नारे लगाने लगे। वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों से आंदोलनकारियों ने करीब आधा घंटा तक बात की। उन्होंने कहा कि उन्हें या तो गिरफ्तार किया जाए या फिर जंतर-मंतर जाने दिया जाए। लोगों का हुजूम देख पुलिस को पीछे हटना पड़ा। पुलिस ने बैरिकेड हटा दिए जिसके बाद पदयात्री आगे बढ़ गए।

सुबह से पैदल चल रहे आंदोलनकारी काफी थक चुके थे। अन्ना पदयात्रियों को जंतर-मंतर पर संबोधित करने वाले थे। लेकिन वहां पहुंचने में हो रही देरी के कारण अन्ना शाम को खुद सुप्रीम कोर्ट के सामने पदयात्रा में शामिल हो गए। उनके आने से जैसे पदयात्रा में दोबारा जोश व उत्साह भर गया। महिलाओं ने फिर डांस करना शुरू कर दिया। ढोल-मंजीरे व नारे की गूंज चारों तरफ सुनाई देने लगी। शाम पांच बजे मंडी हाउस पर अन्ना ने पदयात्रियों को संबोधित किया। उन्होंने कहा कि सरकार ने हमारी बात नहीं मानी तो चार माह बाद रामलीला मैदान में देशव्यापी जेल भरो आंदोलन शुरू किया जाएगा। अन्ना ने कहा, पदयात्रियों का जोश देखकर मैं 77 की उम्र में भी खुद को जवान महसूस कर रहा हूं। जंतर-मंतर पर पहुंचकर पदयात्रियों को रात का खाना भी नसीब होने के आसार नहीं दिखाई दे रहे थे। पदयात्रा से जुड़े एक समन्वयक ने बताया कि जंतर-मंतर पर खाना बनाने की इजाजत न मिलने के कारण हम लोग व्यवस्था नहीं कर पाए। सरकार की ओर से भी रात साढ़े नौ बजे तक खाने की कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी।

भूमि अधिग्रहण के खिलाफ जंतर-मंतर पर हुए विरोध प्रदर्शन में देशभर के लगभग 70 से ज्यादा संगठनों ने भागीदारी की जिसमें तमिलनाडु से मूवमेंट अगेंस्ट न्यूट्रीनो के नेता वाइको, आसाम से अनिल गोगोई, अखिल भारतीय प्रगतिशील महिला संगठन की कविता कृष्णन, दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश राजेंद्र सच्चर, उत्तराखण्ड परिवर्तन पार्टी के अध्यक्ष पीसी तिवारी, सुप्रीम कोर्ट के अधिवक्ता संजय पारीक, सिंगरौली से विजय लक्ष्मी, जनसंघर्ष वाहिनी के भूपेंद्र सिंह रावत, सुनील चोपड़ा आदि की उपस्थिति सराहनीय रही। ●

राष्ट्रीय एकता परिषद् के अध्यक्ष पीवी राजगोपाल ने भूमि अधिग्रहण अध्यादेश का विरोध करने के लिये भूमि अधिकार सत्याग्रह पदयात्रा के जरिये जंतर-मंतर पहुंचकर यह दिखा दिया कि वह एक अच्छे जनपक्षधर नेता होने के साथ-साथ एक अनुशासित संगठन निर्माता भी हैं।

छपते-छपते

भूमि अधिग्रहण अध्यादेश को लेकर अपनी किरकिरी करवा चुकी केंद्र सरकार ने अब अपने कदम पीछे खींचने शुरू कर दिये है। अब वह इस अध्यादेश में ऐसे संशोधन करने की तैयारी कर रही है जिससे कि खेती योग्य जमीन का अधिग्रहण करना आसान नहीं होगा। अब लोक जनशक्ति पार्टी के मुखिया राम विलास पासवान भी भूमि अधिग्रहण विधेयक का समर्थन करने का मन बना चुके हैं। उन्होंने अपने समर्थन के पक्ष में यह तर्क दिया है कि वह संसद में विधेयक के परिप्रेक्ष्य में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा दिये गये बयान में संतुष्ट हैं। हालांकि सत्ताधारी राजग के कुछ सहयोगी अभी भी विधेयक के कुछ प्रावधानों से सशंकित हैं।

सरकार ने कहा है कि अधिग्रहण के लिये सरकारी और बंजर भूमि को शीर्ष प्राथमिकता दी जायेगी तथा किसी भी परियोजना के लिए खेती वाली जमीन का अधिग्रहण तभी किया जायेगा जबकि अधिग्रहण के लिये और कोई विकल्प नहीं हो। ग्रामीण विकास मंत्रालय के सूत्रों के मुताबिक संशोधित कानून में इस बात का पूरा ख्याल रखा जायेगा कि किसानों को अधिग्रहण से कम से कम परेशानी हो और उनको अपनी जमीन का ज्यादा से ज्यादा मुआवजा भी मिल सके। यह भी प्रावधान किया जा रहा है कि यदि शहरी क्षेत्र की जमीन का अधिग्रहण किया जायेगा तो उस पूरी जमीन का 20 प्रतिशत विकसित जमीन भू-स्वामी के लिए आरक्षित होगी। साथ ही भू-स्वामी के पास उससे ली गयी जमीन के अनुपात में अधिग्रहण मूल्य के हिसाब से जमीन लेने का विकल्प भी रखा जायेगा। अर्थात शहर की जमीन के बराबर मूल्य की जमीन कहीं और ली जा सकती है। परंतु पीपीपी परियोजनाओं में 70 फीसदी और निजी परियोजनाओं में 80 फीसदी भू-स्वामियों की सहमति के प्रावधान पर सरकार मौन साधे हुए है जिस पर कि किसानों को सबसे ज्यादा ऐतराज है।

बजट में कृषिक्षेत्र

वित्तमंत्री ने राष्ट्रीय कृषि साझा बाजार बनाने की भी घोषणा की है, परंतु साथ ही यह भी स्वीकार किया है कि उनकी उपज को सर्वश्रेष्ठ अनुमानित मूल्य नहीं मिल पाता है। राष्ट्रीय कृषि साझा बाजार के निर्माण की मंशा किसानों को कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम के दायरे से बाहर निकालने की होगी, परंतु ऐसे में किसान निजी व्यापारियों के रहमोकरम पर निर्भर हो जायेंगे।

कृषि चौपाल

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण द्वारा साल 2014 के लिये जारी ऑकड़ों के अनुसार कृषि पर आजीविका के लिये निर्भर लोगों की आय सिर्फ 3078 रुपये है। इसके बावजूद वर्ष 2015-16 के लिये किये गये बजटीय प्रावधानों में किसानों हेतु किसी भी प्रकार का वित्तीय पैकेज घोषित नहीं किया गया है। स्वयं वित्तमंत्री अरूण जेटली ने कृषि आय में वृद्धि को चार प्रमुख चुनौतीपूर्ण लक्ष्यों में शामिल किया है। यह सर्वविदित है कि वर्तमान में कृषिक्षेत्र गंभीर आर्थिक कठिनाइयों के दौर से गुजर रहा है। कृषि राज्यमंत्री मोहन भाई कुंदारिया ने लोकसभा में भी कहा कि साल 2013 के मुकाबले साल 2014 में किसानों की खुदकुशी के मामलों में 26 फीसद वृद्धि हुई है। श्री कुंदारिया के अनुसार सूखा पड़ने, दैवीय आपदाओं के कारण फसल बर्बाद होने और कर्जे से परेशान होकर 1109 किसानों ने मौत को गले लगाया। इनमें सबसे ज्यादा खुदकुशी के मामले महाराष्ट्र जैसे विकसित और बड़ी जोत वाले प्रदेश में हुए, जहां विभिन्न कारणों से 985 किसानों ने असमय ही मौत को गले लगा लिया।

अब सवाल पैदा होता है कि केवल कृषि ऋण में 50 हजार करोड़ रुपये की बढ़ोत्तरी से कृषिक्षेत्र का क्या भला होगा? ऊपर दिये गये ऑकड़े कृषिक्षेत्र की गंभीर आर्थिक कठिनाइयों को दर्शाते हैं। वास्तविकता यह है कि किसानों के लिये कर्ज के लक्ष्यों में वृद्धि से किसान का भला हो या ना हो परंतु इससे कृषि व्यापार उद्योग का भला अवश्य होता है। बीज कंपनियों, कीटनाशक दवा कंपनियों, कृषि यंत्र बनाने वाले उद्योगों और रासायनिक खाद तथा जैविक खाद निर्माताओं को इसका सर्वाधिक लाभ मिलता है। किसानों को तीन लाख रुपये तक का फसली कर्ज सात प्रतिशत व्याज पर दिया जाता है परंतु यदि किसान समय पर कर्ज को चुका देते हैं तो प्रभावी ब्याज दर चार प्रतिशत ही रहती है। चालू वित्त वर्ष में कृषि कर्ज बांटने का लक्ष्य 8 लाख करोड़ रुपये निर्धारित किया गया है। विगत सितंबर माह के अंत तक 3.7 लाख करोड़ रुपये कर्ज बांटा जा चुका था।

वित्तमंत्री ने राष्ट्रीय कृषि साझा बाजार बनाने की भी घोषणा की है, परंतु साथ ही यह भी स्वीकार किया है कि उनकी उपज को सर्वश्रेष्ठ अनुमानित मूल्य नहीं मिल पाता है। राष्ट्रीय कृषि साझा बाजार के निर्माण की मंशा किसानों को कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम के दायरे से बाहर निकालने की होगी, परंतु ऐसे में किसान निजी व्यापारियों के रहमोकरम पर निर्भर हो जायेंगे। स्पष्ट है कि यह स्थिति किसानों के लिये और ज्यादा बुरी होगी। होना यह चाहिये था कि राष्ट्रीय स्तर पर मंडियों का एक नेटवर्क स्थापित किया जाता और साथ ही किसानों को पंचायती स्तर पर अपनी फसलों के भण्डारण की सुविधा प्रदान की जाती। पंचायती स्तर पर भण्डारण की सुविधा हासिल होने से एक ओर जहां किसानों को अपनी फसल के ढुलान से राहत मिलती वहीं वह अपनी फसल को उस वक्त बेचकर अधिक लाभ कमा सकते थे जबकि कीमतें ऊंची जा रही हों। हालांकि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में भंडार गृह के विकास के लिये 5 हजार करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है परंतु यह रकम नाकाफी है।

कृषि मंत्रालय की सिफारिश पर कपास की लोडिंग और अनलोडिंग पर आरोपित सेवा कर समाप्त कर दिया गया है। सरकार का यह कदम स्वागत योग्य है परंतु इसका सर्वाधिक लाभ बड़े किसानों को ही मिलेगा। क्योंकि छोटी जोत के किसान कपास की खेती नहीं के बराबर करते हैं। 2015-16 में ग्रामीण संरचना विकास कोष में 25,000 करोड़ रुपये के आवंटन का प्रस्ताव किया गया है। दीर्घावधि के ग्रामीण ऋण कोष हेतु 15,000 करोड़ तथा सहकारी ग्रामीण ऋण पुनर्वित्त कोष के लिए 45,000 करोड़ रुपये और लघु अवधि के क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पुनर्वित्त कोष हेतु 15,000 करोड़ रुपये के आवंटन का प्रस्ताव किया गया है।

बजट में नयी सिंचाई योजनाओं की घोषणा तो नहीं की गयी है परंतु प्रधानमंत्री ग्राम सिंचाई योजना तथा सूक्ष्म सिंचाई जल संक्षरण कार्यक्रमों के लिए 5300 करोड़ रुपये के आवंटन का प्रस्ताव अवश्य किया गया है। किसानों की जमीनें यदि बची रहती हैं तो उनके लिये निःशुल्क मृदा सेहत कार्ड के जरिये मिट्टी के परीक्षण का भी प्रावधान किया गया है। पूर्वोत्तर राज्यों के लिये जैविक खेती के विकास हेतु 100 करोड़ रुपये के प्रावधान को उत्साहवर्धक कहा जा सकता है।

बजट को कृषिक्षेत्र के लिये बहुत अधिक आशावादी नहीं कहा जायेगा। यह देश भर के किसानों को निराश करने वाला है। और अब तो इस बजट से किसान और ज्यादा निराश होंगे क्योंकि उत्तर और मध्य भारत में बेमौसमी बरसात ने रवि की फसलों को भारी पैमाने पर नुकसान पहुंचा दिया है। इस नुकसान से किसानों को उबारने के लिये सरकार को फौरी तौर पर उपाय अमल में लाने होंगे। क्योंकि आज भी भारत का कृषिक्षेत्र सिंचाई से ज्यादा मानसून और मौसम की मेहरबानी पर निर्भर करता है। इसलिये कृषि क्षेत्र के लिये बजटीय प्रावधान करते समय यह ध्यान रखना होगा कि वह लचीला, किसानोन्मुख विकासोन्मुख तथा विस्तार किये जा सकने की गुंजाइश रखने वाला हो। ●

किसान पर अब कुदरत की मार

कृषि प्रधान प्रदेशों– उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश और आंशिक राजस्थान के साथ–साथ उत्तराखंड और जम्मू–कश्मीर में मार्च महीने में हुई बेमौसमी बरसात ने काश्तकारों की नींद उड़ा दी है। प्रकृति की इस मार से अन्नदाता कराह उठे हैं।

फिर डरा रहे हैं पूर्वानुमान

कृषि एवं मौसम वैज्ञानिकों का कहना है कि मौसम में आए इस अप्रत्याशित बदलाव का कारण पछुआ विक्षोभ है। मार्च में ऐसे कई पश्चिमी विक्षोभ उत्तर भारत की ओर बढ़ने की आशंका जतायी गयी है। आने वाले दिनों में होली के बाद और अधिक बारिश होने की संभावना व्यक्त की गयी है।

सर्दियों के मौसम में उत्तर भारत में चलने वाली तेज हवाओं को ही पछुआ या पश्चिमी विक्षोभ कहा जाता है। ये हवाएं भूमध्य सागर, अटलांटिक महासागर और कुछ हद तक कैस्पियन सागर से नमी लेकर इसे वर्षा और बर्फ के रूप में भारतीय प्रायद्वीप के अधिकांश हिस्सों में गिरा देती हैं। मौसम विज्ञानियों ने अनुमान व्यक्त किया है कि अफगानिस्तान और उत्तरी पाकिस्तान के ऊपर पश्चिमी विक्षोभ बना हुआ है। जो वर्तमान में जम्मू-कश्मीर की ओर बढ़ रहा है। इससे मार्च महीने में पहाड़ी इलाकों में बारिश, बर्फवारी और ओलावृष्टि के आसार बने रहेंगे।

कृषि चौपाल

समूचे उत्तर-भारत में मार्च महीने के मेह किसानों पर जहां पहले दिन मेहरबान बनकर बरसे वहीं दूसरे दिन इस बेमौसमी बरसात और ओलावृष्टि के साथ चलती तेज हवाओं ने किसानों पर कहर बरसा दिया है। खरा सोना कही जाने वाली गेहूं की फसल को जहां भारी पैमाने पर नुकसान पहुंचा है वहीं दूसरी ओर आलू की फसल को भी काफी नुकसान पहुंचा। नुकसान केवल खड़ी फसल को ही नहीं हुआ है बल्कि अचानक बेमौसमी बरसात के कारण मड़ाई करके बिक्री के लिये खलियानों में रखी गयी फसल भी बर्बाद हुई है। साथ ही सरसों और मौसमी सब्जियों की फसल भी काफी बर्बाद हुई है। गन्ने की बुआई भी अब विलंब से होगी यह तय है।

कृषि प्रधान प्रदेशों- उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश और आंशिक राजस्थान के साथ-साथ उत्तराखण्ड और जम्मू-कश्मीर में मार्च महीने में हुई बेमौसमी बरसात ने काश्तकारों की नींद उड़ा दी है। प्रकृति की इस मार से अन्नदाता कराह उठे हैं। और इधर हमारे प्रधानमंत्री संसद भवन की कैंटीन में लंच कर, कैंटीन की मेहमाननवाजी की किताब में 'अन्नदाता सुखी भव' लिखकर ही अपने आप को धन्य समझ रहे हैं। उनके सिपहसालार भी अपने को धन्य समझ रहे हैं। मार्च का पहला हफ्ता उत्तर भारत के किसानों पर कहर बनकर टूटा है। सिर्फ झमाझम बरसात ही नहीं हुई बल्कि तेज हवाओं और ओलों ने भी गजब ढाया है। रवि की खास फसलें, मैदानी भागों में अगेती गेहूं, लाई, सरसों, अलसी, चना, मसूर, पत्तागोभी, प्याज, टमाटर, अंगूर, आम, तथा आलू और पर्वतीय इलाकों में मटर, आलू, सेब, प्लम आदि को भारी नुकसान हुआ है। अकेले पंजाब प्रांत में लगभग 200 एमएम बारिश हुई है। तथा हजारों हेक्टेयर गेहूं और आलू की फसल खराब हो चुकी है। खराब हो चुकी फसलों की मौद्रिक क्षति का अनुमान कृषि विशेषज्ञों और

मार्च में बारिश (मिलीमीटर में)

शहर	वास्तविक बारिश (2015)	औसत बारिश	पिछले दस साल में सर्वाधिक
दिल्ली (पालम)	83.7	12.0	53.0 (2007)
अमृतसर	77.0	29.0	72.4 (2007)
करनाल	97.4	20.0	60.3 (2007)
देहरादून	143.0	51.3	138.5 (2006)
बीकानेर	31.0	06.3	30.0 (2007)
जबलपुर	67.0	14.0	63.0 (2006)

-ये आंकड़े 8 मार्च तक के हैं

अर्थशास्त्रियों द्वारा अभी लगाया जा रहा है।

उधर पंजाब के मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल ने राज्य के सभी उपायुक्तों को फसल तथा संपत्ति के नुकसान की खास गिरदावरी के निर्देश दे दिये हैं जिससे नुकसान का समय रहते आकलन किया जा सके और किसानों को समय पर मुआवजा दिया जा सके। साथ ही हिमाचल में फलों के उत्पादन को भी भारी क्षति होने के कारण प्रदेश सरकार ने नुकसान का आकलन करने के आदेश दे दिये हैं मामला अब संसद तक पहुंच गया है और अनेक सांसदों ने इस मामले को शून्यकाल के दौरान उठाया जिस पर केंद्रीय कृषि मंत्री राधामोहन सिंह ने कहा है कि बहुत जल्द अतिवृष्टि से प्रभावित राज्यों की रिर्पोट मिल जायेंगी।

इस बेमौसमी बरसात से फसलों को हुए नुकसान पर कृषि अर्थशास्त्री डॉ. देवेंदर शर्मा का कहना है कि हवाऐं यदि अधिक तेज नहीं चलेंगी तो क्षति कम होने की आशा की जा सकती है। एक ओर किसानों को हालिया पेश किये गये आम बजट ने निराश किया और दूसरी ओर अब कुदरत ने भी कहर ढा दिया। एक तो पहले ही गेहूं की कम पैदावार की आशंका जतायी जा रही थी और अब खाद्यान्न संकट जैसी स्थिति उत्पन्न होने की आशंका भी उत्पन्न हो गयी है। हालांकि भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा (दिल्ली) के वैज्ञानिकों ने उम्मीद बंधाते हुए कहा है कि बारिश से किसानों और फसलों को जितनी मार पड़नी थी वह पड़ चुकी है। परंतु समय रहते अपने प्रयासों से किसान अपने नुकसान को कुछ हद तक कम कर सकते हैं। संस्थान द्वारा किसानों की सहायता के लिए एक हेल्प लाइन नं.- 1800118989 भी शुरू किया गया है। संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि किसान देश के किसी भी कोने से इस नंबर पर नि:शुल्क फोन करके सलाह ले सकते हैं।

दरअसल खतरा सिर्फ यह नहीं है कि फसल बर्बाद हो गयी खतरा यह है कि इस बरसात से फसलों को अनेक रोग लगने की आशंका भी जतायी जा रही है। सबसे ज्यादा चिंता की बात यह है कि फसलों को होने वाला नुकसान कोई ऐसा नुकसान नहीं है जिसकी भरपाई अगली फसल से की जा सके। क्योंकि किसान को एक बार किसी फसल में नुकसान हो गया तो फिर उसकी क्षतिपूर्ति का एक ही तरीका है कि सरकार किसानों को इस संकट से उबारने के उपाय करे। हालांकि संसद तक यह मामला पहुंच गया है लेकिन कृषि मंत्रालय इस खबर के लिखे जाने तक अभी पूरी तरह हरकत में नहीं आया था। ●

बांस का कमाल

कृषि चौपाल

योजना आयोग से नीति आयोग बने चुके संस्थान ने बांस को अंतर्राष्ट्रीय पहचान दिलाने के लिये पिछले दिनों एक बैठक की। केंद्र सरकार द्वारा इस बैठक में प्रत्येक विभाग को बांस की उपयोगिता के बारे में नीति तैयार करने हेतु अपने-अपने सुझाव देने के लिये कहा गया था। इस बैठक में यह चर्चा उभर कर आयी कि देश के अनेक इलाकों में घर और टॉयलेट ईंट-पत्थर की बजाय बांस से तैयार होंगे। संभावना यह भी व्यक्त की गयी है कि बांस से तैयार ज्वेलरी, कंप्यूटर के कीबोर्ड, टेबल मैट, चटाई, सोफा कवर आदि अनेक सामान बांस से तैयार किये जायेंगे।

बांस भारत में खासकर पूर्वोत्तर भारत में बहुतायत में पाया जाता है। यह एक किस्म की घास प्रजाति की वनस्पति है। फर्क यह है कि यह सबसे तेजी से बढ़ने वाली घास है। जापान में बांस की अनेक किस्मों में 24 घंटे के अंदर एक मीटर तक की वृद्धि दर्ज की गयी है। इसी बांस को वर्तमान में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनाने की तैयारी पर काम हो रहा है। हालांकि बांस से डलिया, सूप, टोकरी आदि अनेक ग्रहोपयोगी वस्तुओं का निर्माण किया जाता है। साथ ही बांस से घर आदि भी बनाये जाते है। बांस से वंशलोचन नामक आयुर्वेदिक औषधि भी बनायी जाती है। बांस की इस बहुउपयोगिता देखते हुए इससे निर्मित वस्तुओं की घरेलू बिक्री तथा इससे बनने वाली वस्तुओं को निर्यात करने के लिए केंद्र सरकार भविष्य में बांस विकास नीति तैयार करने जा रही है।

बांस विकास नीति को तैयार करने के लिये केंद्रीय परिवहन मंत्री नितिन गडकरी ने सभी मंत्रालयों को पत्र प्रेषित किये हैं तथा उनसे इस संबंध में सुझाव मांगे हैं। इस कार्य हेतु मध्य प्रदेश राज्य बांस आयोग के निदेशक एके भट्टाचार्य को नोडल अधिकारी नियुक्त किया गया है। सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार जारी वर्ष में भारत में, विश्व बांस सम्मेलन आयोजित करने का फैसला लिया गया है। बकौल श्री भट्टाचार्य, स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत बांस से टॉयलेट निर्माण की तैयारी पर काम चल रहा है और निकट भविष्य में इस योजना को अमली जामा पहनाया जायेगा। उनका यहां तक कहना है कि बांस के चूर्ण से बिजली का उत्पादन भी संभव है। आगामी अप्रैल माह में बांस पर राष्ट्रीय स्तर की नीति निर्माण हेतु सभी मंत्रालयों की समुचित बैठक आयोजित की जायेगी।

बांस को रोजगार से जोड़ने के लिए एमएसएमई जैसे मंत्रालय नित नयी खोजों में जुटे हुए है। दरअसल सरकार का इरादा बांस के उद्योगों को संस्थागत स्वरूप प्रदान करने का है। एके भट्टाचार्य का कहना है कि बांस से लगभग 2000 से ज्यादा उत्पादों को निर्माण किया जा सकता है। आइआइटी दिल्ली की सहायता से आज बांस पर अभियांत्रिकी की पढ़ाई की जा सकती है। यह भी गौरतलब है कि बांस अन्य किसी भी पौधे के मुकाबले 35 प्रतिशत अधिक ऑक्सीजन को मुक्त करता है। और इतनी ही मात्रा में कॉर्बनडाई ऑक्साइड को अवशोषित करता है। हमारे पड़ोसी मुल्क चीन की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बांस का अहम् स्थान है। जब कि भारत में बांस के उत्पादों का योगदान काफी निम्न स्तर पर है। ●

भारतीय कृषि का संकट काल

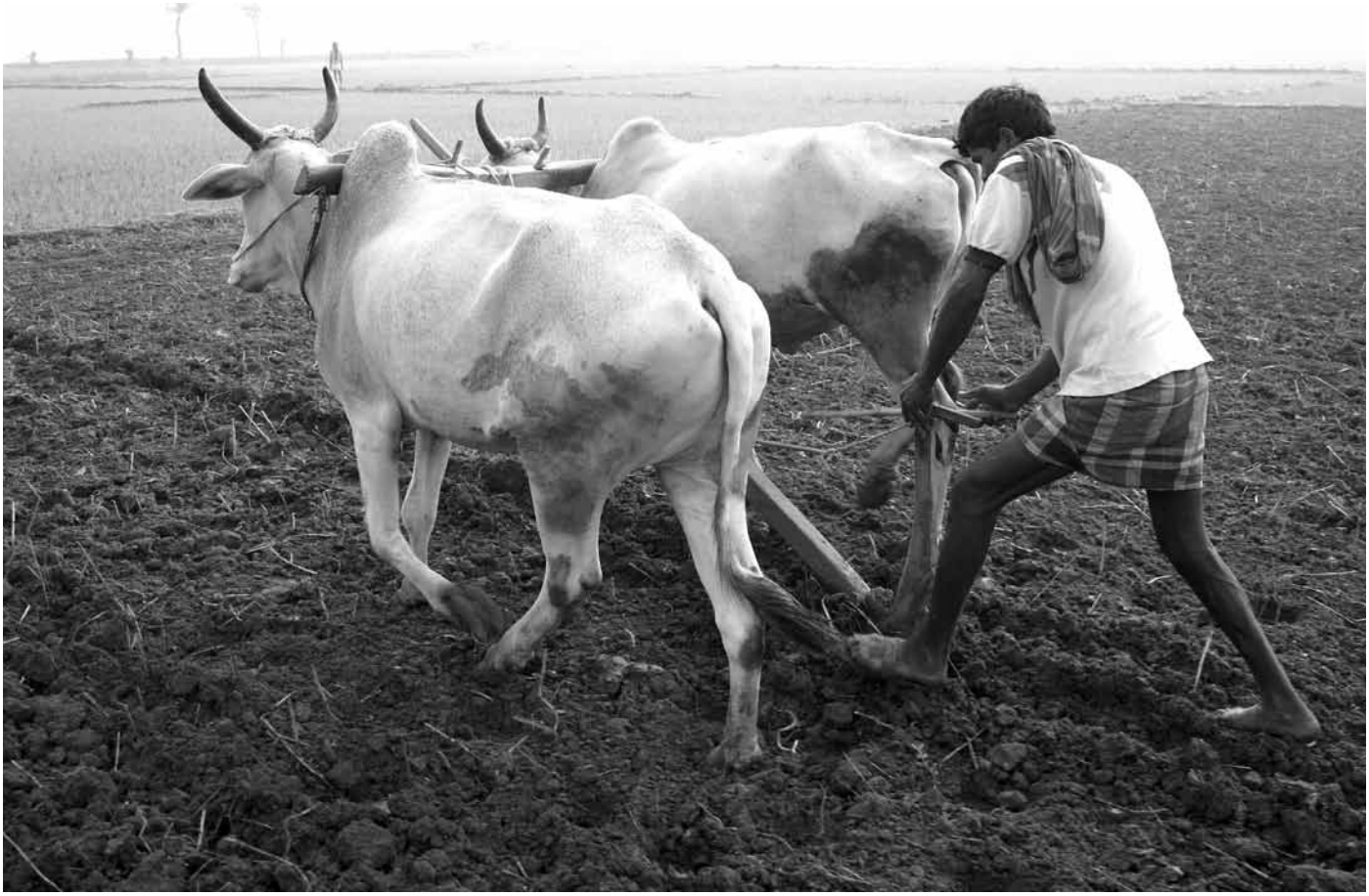

देविंदर शर्मा

सब कुछ सोचे अनुसार चल रहा है। कृषि के संदर्भ में राष्ट्रीय नमूना सर्वे संगठन (एनएसएसओ) की हालिया रिपोर्ट साफ तौर पर बताती है कि जैसा अनुमान लगाया जा रहा था, चीजें उसी तरह चल रही हैं। कृषि न केवल भयावह संकट के दौर से गुजर रही है, बल्कि उसका तेजी से क्षरण भी हो रहा है। मैं चकित नहीं हूं। आखिरकार 1996 में ही विश्व बैंक ने भारतीय कृषि के पतन की दिशा बता दी थी।

तब विश्व बैंक ने अनुमान लगाया था कि अगले बीस वर्षों में यानी 2015 तक भारत में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी इलाकों में पलायन का आंकड़ा ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी की साझा आबादी के आंकड़े की बराबरी कर लेगा। इन तीनों देशों की संयुक्त आबादी 20 करोड़ है और विश्व बैंक ने अनुमान लगाया था कि 2015 के अंत तक ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन का आंकड़ा इस संख्या तक पहुंच सकता है।

यह भयावह स्थिति केवल इसीलिए उत्पन्न हुई है, क्योंकि कृषि फायदे का व्यवसाय नहीं रह गई है। घाटे की खेती करते-करते किसान ऊब चुके हैं और वे न केवल इसे छोड़ने के लिए विवश हैं, बल्कि रोजी-रोटी की तलाश में शहरी इलाकों का रुख भी कर रहे हैं। 2008 की अपनी विश्व विकास रिपोर्ट में विश्व बैंक ने यह इच्छा प्रकट की थी कि भारत भूमि अधिग्रहण के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों के युवाओं के कौशल विकास के लिए देशव्यापी प्रशिक्षण केंद्र बनाने की प्रतिक्रिया तेज करे ताकि उन्हें औद्योगिक श्रमिक के रूप में तैयार किया जा सके।

अब किसानों को कृषि से बाहर निकालने की प्रक्रिया कहीं अधिक स्पष्ट रूप से नजर आ रही है। इसके संकेत पिछले 17 वर्षों में तीन लाख से अधिक किसानों की आत्महत्या तथा 42 प्रतिशत किसानों द्वारा विकल्प उपलब्ध होने की दशा में कृषि छोड़ने के इच्छुक होने जैसे तथ्यों से भी

हालात दिन–प्रतिदिन खराब होते जा रहे हैं। बढ़ती कर्जदारी को समाप्त करने के लिए कोई प्रयास न होना तथा करीब 58 प्रतिशत किसानों के रोज ही भूखे सोने के तथ्य भी यह बताते हैं कि किसान पलायन के अलावा और कुछ नहीं कर सकते। 2011 की जनगणना बताती है कि रोज 2400 से अधिक किसान कृषि छोड़कर शहरों की ओर चल पड़ते हैं।

मिलते हैं। ये तथ्य जिन परिस्थितियों की देन हैं उनमें कृषि को जानबूझकर सार्वजनिक क्षेत्र की फंडिंग से दूर रखने के प्रयास भी शामिल हैं।

हालात दिन-प्रतिदिन खराब होते जा रहे हैं। बढ़ती कर्जदारी को समाप्त करने के लिए कोई प्रयास न होना तथा करीब 58 प्रतिशत किसानों के रोज ही भूखे सोने के तथ्य भी यह बताते हैं कि किसान पलायन के अलावा और कुछ नहीं कर सकते। 2011 की जनगणना बताती है कि रोज 2400 से अधिक किसान कृषि छोड़कर शहरों की ओर चल पड़ते हैं। कुछ स्वतंत्र अनुमान तो हर वर्ष शहर पलायन करने वाले लोगों की संख्या 50 लाख के आसपास बताते हैं।

रघुराम राजन ने जब रिजर्व बैंक के गवर्नर का पद संभाला था तो उन्होंने भी कुछ इसी तरह की भावना व्यक्त की थी। उन्होंने कहा था कि भारत में असली प्रगति तब होगी जब हम लोगों को कृषि से बाहर निकालकर शहरों में लाने में सफल होंगे। वह ऐसा कहने वाले अकेले अर्थशास्त्री नहीं हैं। अधिकांश मुख्यधारा के अर्थशास्त्री भी कई दशकों से इसी तरह के विचार व्यक्त करते रहे हैं। यह इन्हीं विचारों का नतीजा है कि सरकारी नीतियों में कृषि की अनदेखी की जाती है। कृषि भारत के आर्थिक राडार से गायब ही हो गई है।

जब 70 प्रतिशत किसानों के पास एक हेक्टेयर से कम जमीन है और चालीस प्रतिशत से अधिक किसान मनरेगा जॉब कार्ड धारक हैं तब यह अपने आप स्पष्ट हो जाता है कि पिछले कुछ वर्षों में खेती-किसानी किस तरह घाटे का सौदा बनकर रह गई है। सर्वे की रिपोर्ट के अनुसार पांच लोगों का एक सामान्य परिवार फसल के उत्पादन से 3078 रुपये प्रति माह कमाता है और 765 रुपये उसे डेयरी से मिल जाते हैं। अगर इसमें 2069 रुपये प्रतिमाह मजदूरी अथवा सेलरी के तथा 514 रुपये गैर कृषि गतिविधियों के जोड़ दिए जाएं तो एक घर की कुल मासिक आय 6426 रुपये हो जाती है।

दूसरे शब्दों में फसल उत्पादन तथा अन्य संबंधित कार्यों से एक परिवार को 3843 रुपये मासिक प्राप्त होते हैं। इसका मतलब है कि एक कृषक परिवार के घर में आमदनी का केवल 60 प्रतिशत हिस्सा कृषि से आता है। यदि हरित क्रांति के 45 वर्षों बाद भी एक किसान के नसीब में मात्र इतना ही पैसा आता है तो क्या यह राष्ट्रीय शर्म का विषय नहीं है? क्या इसका यह मतलब नहीं है कि तकनीकी विकास के नाम पर अंधाधुंध तरीके से झोंकी गई गहन कृषि तकनीकें किसानों के जीवन में खुशहाली लाने में नाकाम साबित हुई हैं?

वैसे तो एनएसएसओ हमें यह बताता है कि 15.61 करोड़ ग्रामीण घरों में 57 प्रतिशत घर कृषि से जुड़े हुए हैं। इसका मतलब है कि इन परिवारों में कम से कम एक सदस्य या तो कृषि कर रहा है अथवा पशुपालन से जुड़ा हुआ है। लेकिन सच्चाई क्या है? सच्चाई यह है कि खेती से संबंधित ये परिवार भी निरंतर उपेक्षा तथा संवेदनहीनता के शिकार हो रहे हैं।

11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कृषि के लिए कुल बजट आवंटन एक लाख करोड़ रुपये था। 12वीं पंचवर्षीय योजना के तहत अगले पांच सालों में बजट आवंटन बढ़कर डेढ़ लाख करोड़ रुपये हो गया। और 2014-15 में 58 प्रतिशत आबादी को रोजगार उपलब्ध कराने वाली कृषि को केवल 24000 करोड़ मिले। दूसरी ओर इसी साल उद्योग सेक्टर को 5.73 लाख करोड़ रुपये की केवल कर छूट प्राप्त हुई। और भी विचित्र यह है कि मनरेगा तक को कृषि की तुलना में अधिक बजटीय आवंटन मिला।

जब कृषि को जानबूझकर सरकारी फंडिंग से दूर कर दिया गया है तो इसके गंभीर चिंताजनक नतीजे होने ही थे। राहत की एकमात्र बात किसानों को दिया जाने वाला न्यूनतम समर्थन मूल्य यानी एमएसपी है। इसमें भी यह गौर करने लायक है कि पिछले तीन वर्षों में गेहूं और चावल के समर्थन मूल्य में प्रति वर्ष केवल 50 रुपये प्रति क्विंटल की वृद्धि हुई है। यह देश में इन चीजों की बढ़ती महंगाई के अनुरूप भी नहीं है।

किसानों को सहारा देने के बजाय ऐसे हरसंभव प्रयास किए जा रहे हैं जिससे सरकारी खरीद की प्रक्रिया ही समाप्त हो जाए। इसके तहत एमएसपी को खत्म करने के सुझाव दिए जा रहे हैं। इसका मतलब होगा किसानों को खुले बाजार की मनमानी के हवाले कर देना। लागत और मूल्य आयोग खुद ही एमएसपी को समाप्त करने की मांग कर रहा है ताकि बाजार ही यह तय कर सके कि किसानों को उनकी उपज की क्या कीमत मिलनी चाहिए?

इस तरह के सुझाव देते हुए यह नहीं बताया जा रहा है कि केवल आठ प्रतिशत किसानों को ही एमएसपी का लाभ होता है और हर लिहाज से 92 प्रतिशत किसान उस निजी व्यापार पर निर्भर बने रहते हैं जो उनका शोषण आज तक करता रहा है।

पंजाब के किसानों को एक सुनिश्चित एमएसपी हर वर्ष मिलता है, जबकि बिहार के किसान इससे वंचित रहते हैं। अगर एमएसपी समाप्त कर दिया जाता है तो पंजाब के किसान भी बिहार जैसे हालात से गुजरने के लिए विवश होंगे। खाद्य मंत्रालय ने राज्य सरकारों को यह जो निर्देश दिया है कि वे केंद्र द्वारा घोषित एमएसपी के ऊपर किसानों को कोई बोनस न दें वह इसी दिशा में उठाया गया एक कदम है।

(साभार: रविवार.कॉम)

मनरेगा से जोड़ी जाए खेतिहर मजदूरी

आज जनसंख्या के हिसाब से अन्य देशों के मुकाबले हमारे पास कृषि योग्य भूमि औरों से अधिक है। मगर फिर भी हमारे यहां भूख से मरने वालों की संख्या विश्व अनुपात में 40 प्रतिशत है। भंडारण की कमी व कृषकों में कुछ फसलों के उत्पादन के प्रति उदासीनता को भी सरकार गंभीरता से नहीं लेना चाहती है।

अनूप आकाश वर्मा

दरअसल, सवाल नजरिए का है... जरा विचारिये, आज छटे वेतन आयोग के लागू होने के बाद से सरकार की सेवा में कार्यरत एक चपरासी को तकरीबन 15 हजार रुपये मासिक वेतन प्राप्त होता है। अच्छी बात है। मगर अब उन किसानों की नियति को क्या कहेंगे जो पूरे माह दिन-रात एक कर खेतों में खून-पसीना बहा कर भी 2 से 3 हजार रुपयों के बीच सिमट कर रह जाता है। ये ठीक है कि एक चपरासी और किसान की तुलना नहीं की जानी चाहिए, मगर अर्थ के आधार पर इतनी व्यापक भिन्नता कहीं न कहीं मन में एक सवाल का रूप लिए रह-रह कर कौंधती जरूर है कि हमारे योजनाकार भी अपनी दोनों आंखों की तुलना करने में कितने माहिर हैं। जो एक पक्ष को सेवा के बदले तो उसका नियत वेतन दे देते हैं मगर इस देश का पेट भरने वाले किसानों व खेतिहर मजदूरों को विषम परिस्तिथियों में भी जीवित रहने के लिए कोई सुनिश्चित आर्थिक गारंटी नहीं देना चाहते और यकीन मानिए अर्थ की यही अनिश्चितता भी एक कारण रही है जिसने इस देश के लाखों किसानों को आत्महत्या करने पर विवश कर दिया व देश का पेट भरने वाले खुद भूखों मरने पर मजबूर हो गए। देश के विकराल कृषि संकट और किसानों द्वारा की जानेवाली आत्महत्याओं को केन्द्र में रखते हुए पी. साईनाथ ने काफी समय पहले लिखे अपने एक लेख में किसानों की आत्महत्याओं का जिक्र करते हुए लिखा है कि वर्ष 1997 से 2005 तक के बीच देश भर में कुल 9,77,107 लोगों ने आत्महत्याएं कीं, जिनमें से 1,49,244 किसान थे। ये आंकड़े जाहिर है अब बढ़ चुके हैं, मौजूदा तस्वीर भी कम भयावह नहीं है।

मगर सवाल यही है कि क्या हमारा राजनीतिक तंत्र एक कलावती के नाम को उठा कर संसद तक घुमाने भर के लिए ही है या कुछ मिसाल देने लायक कार्य जमीनी हकीकत का अमलीजामा भी पहनेंगे। क्या सरकार इस ओर एक स्वस्थ नजरिया नहीं रख सकती जिसमें एक आम किसान और भूमिहीन व सीमान्त किसान या खेतिहर मजदूर विषम परिस्तिथियों में भी अपने परिवार को आर्थिक रूप से सुरक्षित महसूस कर सके। इसमें कोई दो राय नहीं कि चाहे प्राकृतिक आपदा हो या फिर बाजार के चढ़ते-उतरते भाव, उसका पहला सीधा असर छोटी जोत के किसानों व खेतिहर मजदूरों, जिनके पास 5-7 बीघे जमीन होती है, पर ही पड़ता है। बड़ी जोत के किसान इससे विशेष प्रभावित नहीं होते जिसके दुष्परिणाम भी समय-समय पर सामने आते रहते हैं।

यकीन मानिए, यदि आज किसानों का सर्वेक्षण कराया जाए तो मौजूदा में से ज्यादातर ऐसे मिलेंगे जो कृषि व्यवसाय को तुरंत छोड़ देना चाहेंगे अगर उनके पास विकल्प मौजूद हो। इसलिए इसमें बड़ा सुझाव यह है कि हमारे योजना निर्माता जो बंद कमरों में बैठ कर ही देश की अमीरी-गरीबी की कागजी नूरा-कुश्ती में मग्न हो वातानुकूलित कमरों में कुर्सी तोड़ते हैं, उन्हें चाहिए कि छोटी जोत के किसानों को भी खेतिहर मजदूरों की श्रेणी में रखकर मनरेगा जैसी विशाल योजना को कृषि जगत से जोड़ कृषि व्यवसाय को मजबूती प्रदान करें। जो वर्तमान में उपेक्षाग्रस्त है और उसे ऐसी मेहनतकश योजना की सबसे ज्यादा जरूरत है। गौर करें तो मनरेगा में वही लोग कागजी तौर पर कार्यरत हैं जो पूर्व में खेतिहर मजदूर थे।

हालांकि मनरेगा में होने वाला काम मशीनों से कम खर्च व कम समय में किया जा सकता है परन्तु राजनीतिक गणित इसमें मजदूरों की ही मांग करता है जो कहीं-कहीं नाहक भी लगती है। इसलिए जो काम मशीनों से हो सकता है उसमें सिर्फ रोजगार के नाम पर मजदूरों का प्रयोग गैर जरूरी है। परिणामत: इससे खेतिहर मजदूरों की लगातार कमी सामने आई है और कृषि व्यवसाय पूरी तरह प्रभावित हुआ है क्योंकि ये ठीक है कि कृषि क्षेत्र में भी काम मशीनों से होता है परन्तु कृषि जगत में मजदूरों का अपना विशेष महत्त्व है। जिनके अभाव में कृषि व्यवसाय निरंतर पिछड़ रहा है और कृषकों में भी भारी निराशा देखने को मिल रही है। गांवों में हालात ये हैं कि अब खेती के लिए मजदूर खोजे नहीं मिल रहे हैं। जो मिलते भी हैं तो उनके भाव और ढंग इतने गैर वाजिब होते हैं कि किसी भी कृषि व्यवसायी का बजट बिगड़ जाए।

इसमें नजरिए की ही बात है और जब तक सरकार कृषि और कृषकों को उदासीनता भरी तिरछी नजर से ही देखती रहेगी तब तक हमारा देश एक कृषि प्रधान देश होकर भी भुखमरी के संताप से पीड़ित रहेगा। समस्या ये है कि पाश्चात्य संस्कृति में हाईटेक हो चुकी सरकार आज कृषि को एक सफल व्यवसाय के तौर पर आंकने को तैयार नहीं है। जबकि किसी भी राष्ट्र का यह सबसे जरूरी और प्रमुख व्यवसाय होता है।

आज जनसंख्या के हिसाब से अन्य देशों के मुकाबले हमारे पास कृषि योग्य भूमि औरों से अधिक है। मगर फिर भी हमारे यहां भूख से मरने वालों की संख्या विश्व अनुपात में 40 प्रतिशत है। भंडारण की कमी व कृषकों में कुछ फसलों के उत्पादन के प्रति उदासीनता को भी सरकार गंभीरता से नहीं लेना चाहती है। जिसके परिणाम भी कम घातक नहीं हैं। दलहन आदि में हमारी स्थिति अच्छी नहीं है। खाने-पीने की चीजों के दाम आसमान छू रहे हैं। अनाज भंडारण की हमारे पास आज भी कोई ठोस रणनीति नहीं है। लाखों टन अनाज प्रतिवर्ष सरकार की लापरवाही की भेंट चढ़ जाता है। गरीब कराहता रहता है। सरकार सोती रहती है। इसलिए इसे देश का पेट भरने वाले किसानों को उनके अपने हाल पर छोड़ सरकार जब संसद ठप्प का प्रायोजित खेल खेलती है तो और भी ज्यादा दु:ख होता है। मगर किसान तो प्रकृति का गुलाम और स्वभाव से मजबूर है सो चाह कर भी हड़ताल पर नहीं जा सकता। और सरकार कृषि के प्रति उसके इस समर्पण का नाजायज लाभ उठाना अच्छी तरह जानती है, वो उठा भी रही है, मगर सरकार यदि थोड़ी सी समझदारी और दूरदर्शिता से इस कृषि व्यवसाय की समस्या को समझे और जनहित में थोड़ा भी विवेक इस्तेमाल करे तो हम आज भी अपनी जनसंख्या को भूख की मौत मरने से बचा सकते हैं। ●

दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना

कृषि चौपाल

देश के सभी हिस्सों में सातों दिन चौबीस घंटे निर्बाध, गुणवत्तापूर्ण बिजली मुहैया कराना श्री नरेन्द्र मोदी सरकार की बड़ी प्रतिबद्धताओं में से एक है फिर भी बुनियादी ढांचे की कमी की वजह से बड़े ग्रामीण क्षेत्रों तथा कई गरीब परिवारों को अब तक यह सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाई है। हालात तब और बदतर हो जाते हैं जब देश के लाखों किसान अपने खेतों की सिंचाई के लिए पंप द्वारा भूजल का उपयोग करना चाहते हैं लेकिन बिजली नहीं मिलने के कारण वे ऐसा नहीं कर पाते। पानी का गिरता स्तर तथा ऊर्जा की उच्च सब्सिडियों वाले सस्ते लेकिन शक्तिशाली पंप, बिजली की काफी खपत करते हैं। इससे न केवल राज्यों पर राजकोषीय घाटे का बोझ काफी बढ़ जाता है बल्कि इसका परिणाम बिजली की कटौती के रुप में सामने आता है जो लोगों की सुविधाओं और उत्पादन में कमी ला देता है।

नकारात्मक रुझान को बदलने के लिए कई राज्यों ने ग्रामीण बिजली के लिए अलग-अलग कार्यक्रम तैयार किये है। जिसके तहत कृषि तथा गैर कृषि उपभोक्ताओं के लिए अलग-अलग व्यवस्था की जाती है। विश्व बैंक के द्वारा इस योजना के मूल्याकंन के अनुसार गुजरात इस योजना का बेहतर और शानदार उदाहरण है। गुजरात सरकार ने बिजली चोरी की घटनाओं पर लगाम लगाने और जारी दिशा-निर्देशों के पालनों से इनकार करने वाले किसानों के लिए आदर्श व्यवस्था तैयार की। अंत में, गुजरात की बिजली इकाईयों ने 500 पूर्व सैनिकों की तैनाती के जरिये नियमों को क्रियान्वित करने का फैसला किया। गुजरात के लोड प्रंबधन सुधारों से कुल मिलाकर, किसानों के बीच बिजली और भूजल दोनों की ही मांग में कमी लाने का प्रयास किया गया, जिसके परिणामस्वरूप मुख्य रुप से गांवों और लघु ग्रामीण उद्योगों को अधिक बिजली की आपूर्ति की गई।

केंद्र सरकार द्वारा हाल ही में दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना (डीडीयूजीजेवाई) को मंजूरी दी गई है। इस योजना की प्रेरणा गुजरात सरकार द्वारा लागू इसी प्रकार की योजना से मिली है। इस योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में बहु प्रतीक्षित सुधारों को लागू करने में मदद मिलेगी। योजना के अंतर्गत ग्रामीण घरों और कृषि कार्यों के लिए अलग-अलग फीडर

की व्यवस्था कर पारेषण और वितरण ढांचे को मजबूत किया जाएगा। इसी के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में सभी स्तरों पर बिजली के मीटर लगाए जाएंगे। इस व्यवस्था की सहायता से ग्रामीण घरों को तथा कृषि उपभोक्ताओं को 24 घंटे बिजली मुहैया कराने में मदद मिलेगी। इससे पहले भी ग्रामीण क्षेत्रों को बिजली की आपूर्ति के लिए शुरू की गई राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना को नयी योजना में सम्मिलित किया गया है।

योजना के घटक

योजना का प्रमुख भाग अलग-अलग फीडर की व्यवस्था कर उप-पारेषण तथा वितरण नेटवर्क को मजबूत बनाना है और सभी स्तरों जैसे इनपुट पाइंट, फीडर और वितरण ट्रांसफार्मर पर मीटर लगाना है। राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना के तहत पहले ही 'माइक्रो एंड ऑफ-ग्रिड डिस्ट्रीब्यूशन नेटवर्क एंड रूरल इलेक्ट्रीफिकेशन' का कार्य किया जा चुका है।

बजटीय सहायता

इस योजना के लिए कुल 43 हजार 33 करोड़ के निवेश की आवश्यकता है। जिसमें से भारत सरकार (योजना की पूरी अवधि में) 33 हजार 4 सौ 53 करोड़ की सहायता देगी। निजी डिस्कॉम एवं राज्य बिजली विभागों समेत सभी डिस्कॉम इस योजना के तहत वित्तीय सहायता के लिए पात्र होंगी। डिस्कॉम विशिष्ट नेटवर्क जरूरत को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण ढांचागत कार्यों को मजबूत बनाने को वरीयता देंगी और इस योजना के तहत आने वाली परियोजनाओं के लिए विस्तृत परियोजना रिपोर्ट तैयार करेंगी। इस योजना को क्रियान्वित करने के लिए नोडल एजेंसी ग्रामीण विद्युतीकरण निगम (आरईसी) होगी। आरईसी, योजना के लागू किए जाने की मासिक प्रगति रिपोर्ट को ऊर्जा मंत्रालय तथा केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण के समक्ष प्रस्तुत करेगी। इस रिपोर्ट में वित्तीय तथा वास्तविक प्रगति का ब्यौरा दिया जाएगा।

निगरानी समिति

ऊर्जा सचिव की अध्यक्षता में एक निगरानी समिति, योजना के तहत परियोजनाओं को स्वीकृति देगी तथा इनको लागू किए जाने की निगरानी करेगी। इस योजना के तहत अनुशंसित दिशा-निर्देशों के अनुरूप योजना का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए बिजली मंत्रालय, राज्य सरकार और डिस्कॉम के बीच एक उपयुक्त त्रिपक्षीय समझौता किया जाएगा जिसमें पावर फाइनेंस कार्पोरेशन एक नोडल एजेंसी होगी। राज्य बिजली विभागों के मामलों में द्विपक्षीय समझौते होंगे।

योजना की अवधि

कार्य के लिए पत्र जारी किये जाने की तारीख से 24 महीनों की अवधि के भीतर योजना को पूरा किया जाएगा।

वित्त पोषण पद्धति

योजना के अनुदान का हिस्सा विशिष्ट वर्ग राज्यों के अलावा अन्य राज्यों के लिए 60 फीसदी (अनुशंसित उपलब्धि अर्जित करने पर 75 प्रतिशत तक) और विशिष्ट वर्ग राज्यों के लिए 85 फीसदी (अनुशंसित उपलब्धि अर्जित करने पर 90 प्रतिशत तक) तक है। अतिरिक्त अनुदान के लिए अपेक्षित उपलब्धियां हैं- योजना का समय पर पूरा होना, एटी एंड सी में अपेक्षित कमी और राज्य सरकार द्वारा सब्सिडी को अग्रिम रूप से जारी करना। सिक्किम समेत सभी पूर्वोत्तर राज्य, जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड विशिष्ट वर्ग राज्यों में शामिल हैं। ●

अस्तित्व का सवाल

भारत सरकार को चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान हिमालयी क्षेत्रों की याद आई और तब पांचवीं पंचवर्षीय योजना में हिमालय क्षेत्र के विकास हेतु हिल एरिया डेवलपमेंट नाम से एक परियोजना बनायी गयी। परंतु यहां भी वही गलती की गयी थी। इस योजना के क्रियान्वयन के मानक मैदानी हिसाब से तय करे गये थे। और यही गलती पहाड़ों के विकास के लिए विभिन्न परियोजनाएं तैयार करते समय आज भी की जा रही है।

गणेश चन्द्र पाण्डे

हिमालयी क्षेत्र के अन्तर्गत भारत के कुल 11 सीमान्त प्रान्त आते हैं। इन राज्यों से देश की संसद में कुल 36 सांसद निर्वाचित होकर पहुंचते हैं। आजकल मोदी सरकार द्वारा पारित भू-अर्जन अध्यादेश बहसतलब है। इस अध्यादेश को लेकर संसद के बाहर जहां किसान आंदोलित हैं, वहीं संसद के भीतर भी तीखी बहस जारी है। हिमालयी भू-भाग को लेकर सुर्खियां तभी बनती हैं, जब यहां प्राकृतिक आपदाएं आती हैं। जब यहां सीमापार से घुसपैठ होती है या कभी-कभार कोई केंद्रीय मंत्री इस क्षेत्र में राजनीतिक भ्रमण पर पहुंचता है। वास्तविकता यह है कि इस भू-भाग के बारे में राष्ट्र की मुख्य धारा में कभी भी चिंतन और चिंता जाहिर नहीं की गयी। वर्तमान में चल रहे किसान आंदोलन के संदर्भ में हम यह भूल जाते हैं कि हिमालय का हमारे देश की खेती-किसानी से सीधा संबंध है।

देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 17 प्रतिशत भू-भाग हिमालयी क्षेत्र के अंतर्गत आता है। यह हिमनदों से निकलने वाली सदानीरा नदियों का उद्गम स्थल है। बिना हिमनदों के सदा बहने वाली नदियां भी इसी हिमालयी क्षेत्र से निकलती हैं। देश की अधिकांश कृषिभूमि को यहां से निकलने वाली नदियों से नहरें निकालकर सींचा जाता है। यहां विशालकाय बांध स्थापित किये गये हैं जो कि देश की अधिकांश बिजली जरूरतों को पूरा करते हैं। यहां के विभिन्न बांध जलाशयों को मत्स्याखेट के लिये ठेके पर देकर भारी राजस्व का अर्जन होता है। परंतु अफसोस इस बात का है कि हिमालयी सरोकारों से जुड़े सवाल संसद में कभीकभार ही सुनायी देते हैं। यही कारण है कि हिमालयी सरोकारों की ओर सरकारों का ध्यान आकृष्ट करने के लिये हिमालय दिवस मनाने की शुरुआत की गयी है। हर साल 9 सितंबर को भारत के अनेक हिस्सों में हिमालय दिवस मनाया जाता है।

वर्तमान में बहसतलब भू-अर्जन अध्यादेश को लेकर संसद और सड़क पर जो बहसें हो रही हैं, उसमें भी हिमालयी राज्यों की चिंता कहीं नजर नहीं आती है। पंचवर्षीय नियोजन के अन्तर्गत भी हिमालयी क्षेत्र के विकास के लिये कोई विशेष उपाय अमल में नहीं लाये गये। यदि हिमालय के जलवायविक परिवर्तन से सीधे प्रभावित होने वाले राज्यों की भी गणना

की जाये तो भारत के अनेक राज्य हिमालय से लाभार्थी हैं। हिमालय को मृदुजल का विश्व स्तर पर एक बहुत बड़ा भंडार माना जाता है। इस भू-भाग का लगभग 46 प्रतिशत हिस्सा सघन वन क्षेत्र है। इन वनों में देवदार जैसे सदाबहार वनों के साथ अनेक महत्वपूर्ण औषधीय वृक्ष एवं वनस्पतियां पायी जाती हैं। इसका भौगोलिक और व्यावसायिक तथा पर्यावरणीय महत्व सिर्फ भारत के लिये ही नहीं अपितु पूरी दुनिया के लिये समान रूप से है। और इसी नजरिये से इसको देखे जाने की जरूरत भी है।

भारत सरकार को चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान हिमालयी क्षेत्रों की याद आई और तब पांचवीं पंचवर्षीय योजना में हिमालय क्षेत्र के विकास हेतु हिल एरिया डेवलपमेंट नाम से एक परियोजना बनायी गयी। परंतु यहां भी वही गलती की गयी थी। इस योजना के क्रियान्वयन के मानक मैदानी हिसाब से तय करे गये थे। और यही गलती पहाड़ों के विकास के लिए विभिन्न परियोजनाएं तैयार करते समय आज भी की जा रही है। ताजा भूमि-अधिग्रहण अध्यादेश इसका गवाह और सबूत दोनों है। जब हिमालयी विकास की ओर पहले-पहल सोचा गया था, तब से लेकर अब तक गंगा-यमुना में काफी पानी बह चुका है। और आज भी हिमालय और हिमालयवासियों के प्रति सरकार चिंतित हो ऐसा कुछ भी नजर नहीं आता।

वर्ष 2015-16 के आम बजट में भी हिमालयी राज्यों तथा हिमालयवासियों की घोर उपेक्षा की गयी है। गौरतलब है कि भारतीय हिमालय के उस पार पड़ोसी मुल्क चीन ने अति आधुनिक रेल नेटवर्क स्थापित कर दिया है। परंतु भारत सरकार आज तक हिमालयी राज्यों में उसी रेल नेटवर्क पर आश्रित है, जिसे अंग्रेज स्थापित कर गये थे। बीच में इस नेटवर्क के विस्तार के इक्का-दुक्का प्रयास हुए हैं, जो इस सीमांत क्षेत्र के महत्व को देखते हुए नाकाफी हैं। इस बीच भूमि अधिग्रहण सरीखे वन संरक्षण, पशु अत्याचार आदि अधिनियमों के चलते हिमालय के निवासियों के प्राकृतिक संसाधनों पर उनके अधिकारों में भी काफी कटौती हुई है। इस क्षेत्र से बहने वाली नदियों पर एक ओर जहां जल-जंगल, जमीन, खनन माफियाओं की कुदृष्टि है, वहीं इनमें से अधिकांश नदियां सूखने के कगार पर हैं। हिमालय में स्थित हिमनद प्रतिवर्ष बड़ी तेजी से पीछे खिसक रहे हैं। 16-17 जून, 2013 को उत्तराखंड सहित समूचे हिमालयी भू-भाग की दु:खद जल प्रलय को अभी लोग भूले नहीं होंगे। साथ ही विगत वर्ष जम्मू-कश्मीर में पेश आयी बाढ़ आपदा को भी अभी जनमानस ने बिसराया नहीं होगा। समूचा हिमालयी क्षेत्र वर्तमान में प्राकृतिक आपदाओं और मानव-वन्यजीव संघर्षों की आवृत्ति के लिये अधिक जाना जा रहा है।

यहां पर प्राकृतिक आपदाओं में हुई एकाएक वृद्धि को केवल दैवीय आपदा कह देना बड़ी भूल होगी। विशालकाय बहुउद्देशीय जल विद्युत परियोजनाएं, सड़कों का विस्तारीकरण, तीर्थयात्रियों की बजाय सैलानियों का अनियमित भ्रमण, स्थायी और मूल निवासियों का भारी संख्या में पलायन और हक-हकूकों के छिन जाने के कारण प्राकृतिक संपदा के संरक्षण के प्रति यहां के निवासियों की उदासीनता आदि कुछ ऐसी वजहें हैं जो कि यहां की प्राकृतिक आपदाओं के लिये पृष्ठभूमि तैयार करने का काम करती हैं। केंद्र सरकार के पदारूढ़ होते ही गंगा की शुद्धता के एक्शन प्लान के बारे में काफी शोरगुल शुरू हो गया था। वर्तमान में भी जल-संरक्षण वर्ष के तौर पर यह शोरगुल जारी है। इसके लिये बाकायदा जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण मंत्रालय गठित किया गया है। परंतु यहां पर यह बात समझ से परे है कि हिमालय का संरक्षण किये बिना गंगा या अन्य नदियों का संरक्षण और शुद्धता कैसे संभव है? पिछली केंद्र सरकार ने भी 'यमुना बचाओ' के नाम पर करोड़ों रुपये फूंक डाले थे। यमुना के मायके हिमालय और उसके प्रवाह प्रांतों की तो किसी को होश नहीं थी, परंतु 'यमुना बचाओ' के नाम पर तत्कालीन सरकारें और उनके मुंह लगे सेलिब्रिटी साधु तथा पेज-3 पर्सन दिल्ली में यमुना बचाने में लगे रहे। और अब इसी तर्ज पर गंगा बचाओ अभियान चल रहा है।

हिमालयी प्रदेश आज मानव जनित कारणों से घटित होने वाली तमाम प्राकृतिक आपदाओं, मानव-वन्यजीव संघर्षों तथा मानव समुदायों के पलायन से जूझ रहा है। हिमनदों, जीवों और वनस्पतियों की विविधताओं से समृद्ध, अथाह मृदु जल का भण्डार धारक यह क्षेत्र आज अपने अस्तित्व से संघर्ष करता दिखायी देता है। और गंगा-यमुना को दिल्ली में शुद्ध करने की कवायद करने वाले यह नहीं समझ पा रहे हैं कि जब तक हिमालय नहीं बसेगा तब तक हिमालय क्षरित होना जारी रहेगा और जब तक इस क्षेत्र का क्षरण जारी रहेगा तब तक न तो गंगा को बचाया जा सकता है और न ही अन्य नदियों को। अब तो योजनाएं बनाने वाला आयोग भी नहीं रहा जो कि विकास की नीतियां तैयार करता था। इस आयोग द्वारा दिये जाने वाले चाहे वह एक किस्म के सुझाव ही होते थे, परंतु सरकार को सुझाव तो मिलते ही थे। अब नीति आयोग है, जो कि पूर्णत: प्रधानमंत्री कार्यालय का मुखापेक्षी है अत: हिमालय के संरक्षण का सवाल भी प्रधानमंत्री कार्यालय का मुखापेक्षी माना जायेगा।

गंगा-यमुना ही नहीं बल्कि भारत की उन सभी सदानीरा नदियों को बचाने का सवाल है जो हिमालय से निकलती हैं और साथ ही हिमालय के लिये एक समग्र तथा व्यापक योजना की आवश्यकता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि हिमालय का समूचे देश के ही नहीं अपितु समूचे भारतीय प्रायद्वीप के पर्यावरण पर प्रभाव पड़ता है। हिमालय के निवासियों की समृद्धता के बिना हिमालय और हिमालय से जुड़ी किसी भी समस्या के समाधान का प्रयास बेमानी ही कहा जायेगा। ●

हिमनदों, जीवों और वनस्पतियों की विविधताओं से समृद्ध, अथाह मृदु जल का भण्डार धारक यह क्षेत्र आज अपने अस्तित्व से संघर्ष करता दिखायी देता है।

अनिवार्य हो गोबर व गोमूत्र का प्रबंधन

यदि गोबर व गोमूत्र के प्रबंधन का तकनीकी विकास कर लिया जाए तो हमारे देश की कृषि में आशानुकूल विकास तो होगा ही, हमारे गांवों की माली हालत भी सुधरेगी। साथ ही भारत जैविक खेती में एक आदर्श राष्ट्र भी होगा।

बाबा मायाराम

भारतीय संस्कृति गाय को मातृरूपा तो मानती ही रही है, परंतु प्राचीन भारतीय अर्थ-व्यवस्था मे 'गोधन' को श्रेष्ठतम धन भी माना गया है। श्रीकृष्ण का बालरूप गोपाल हमारी नस-नस में समाया है। आजीवन ही नहीं मृत्यु उपरांत भी गोदान का महत्त्व शास्त्रों में भरा पड़ा है। गउएं जहां रहती हैं, वहीं गांव है। हमारी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था और गो केंद्रित कृषिकलापों का संक्षिप्त ब्यौरा ही इस लेख का मूल उद्देश्य है। एक सामान्य जाति की दोगली नस्ल की गाय प्रतिदिन लगभग 30 किलोग्राम गोबर देती है। इतना गोबर गैस प्लांट में डाल दिया जाए, तो तीन-चार सदस्यों के परिवार को इससे प्राप्त गैस से रसोई ईंधन का निर्वाह हो जाता है।

अब गोबर गैस प्लांट से निकलने वाले घोल को वर्मी कम्पोस्ट यूनिट में डाल दिया जाए और गोशाला से प्राप्त तथा अन्य कृषि उत्पाद अवशेषों को मिश्रित करते रहें तो साल भर में 36 फुट गुणा आठ फुट वर्मी कंपोस्ट यूनिट हरी खाद बन जाता है, जिसका कुल भार 100 क्विंटल होगा। बाजार में वर्मी कम्पोस्ट खाद का भाव कम से कम छह रुपए किलोग्राम है। इस गणना के अनुरूप एक गाय से हमें वर्ष भर में 60 हजार रुपए की जैविक खाद प्राप्त हुई। यदि महीने का एक सिलेंडर भी बचा तो ये बचत 4500 रुपए वार्षिक हुई। माना कि भारत के सभी प्रांतों में गोमूत्र का क्रय-विक्रय समान रूप से हो पाना संभव नहीं, परंतु कृषि स्वास्थ्य में गोमूत्र की भूमिका अतुलनीय है। सीधी सी बात है कि हमारी कृषि के शत्रुकीट अपनी संतति के विकास व सुरक्षा की दृष्टि से वहीं अधिक प्रजनन करते हैं, जहां स्वाद, विषहीन, गंधहीन वनस्पति उपलब्ध हो।

यदि हम अपनी कृषि से स्वाद व गंध बिगाड़ दें, हल्का जैविक विष स्प्रे कर दें, तो ये शत्रु कीट-पतंगे उस स्थान से इधर-उधर पलायन कर जाएंगे। लेखक ने ऐसा सफल प्रयोग किया है। यदि दस लीटर गोमूत्र में एक किलोग्राम बसूटी, एक किलोग्राम बणा, एक किलोग्राम नीम या दरेक या कड़वों की पतियां साग की तरह काट कर डाल दी जाएं और इस मिश्रण को दो-तीन मास तक सड़ने दिया जाए, तो 15 लीटर पानी में इस सड़े मिश्रण का एक किलोग्राम मिलाकर छिड़काव किया जाए तो न केवल कीट पतंगें पलायन करेंगे, बल्कि पौधे को गोमूत्र से प्राकृतिक यूरिया तथा अन्य खनिज भी उपलब्ध होंगे। यदि यह छिड़काव गर्मियों में साप्ताहिक सर्दियों में मासिक तौर पर नियमित होता रहे, तो आपने साल भर में 100 लीटर गोमूत्र का प्रयोग कर दस हजार रुपए की बचत कर ली और विषाक्त छिड़काव न कर आपने समाज के अमूल्य स्वास्थ्य की रक्षा भी कर ली। शेष गोमूत्र को सम भाग पानी मिला कर पौधों या पेड़ों को दिया जा सकता है।

इससे उत्पाद के गुण तथा मात्रा दोनों में भारी सकारात्मक परिवर्तन दिखेगा और किसी रासायनिक खाद की आवश्यकता अनुभव न होगी। इस प्रकार के नियोजित उपयोग के उपरांत गणना करें, तो आपकी गाय ने 60000+4500+20000=84500 वार्षिक परोक्ष आय आपको दे दी। गाय से मिलने वाले दूध तथा संतति संवर्धन की आय का लेखाजोखा आप पर छोड़ता हूं। हिमाचल प्रदेश उद्यानिकी तथा वानिकी विश्वविद्यालय नौणी (सोलन) का एंटोमॉलोजी विभाग डॉ. उषा चौहान के नेतृत्व में नवजबाई टाटा मेमोरियल ट्रस्ट से मिले एक प्रोजेक्ट के अंतर्गत गोमूत्र के कृषि उपयोग पर शोध कार्य कर रहा है तथा लेखक इस विभाग का रिसोर्स पर्सन होने के नाते विश्वविद्यालय से निरंतर संपर्क में है। यदि गोबर व गोमूत्र के प्रबंधन का तकनीकी विकास कर लिया जाए तो हमारे देश की कृषि में आशानुकूल विकास तो होगा ही, हमारे गांवों की माली हालत भी सुधरेगी। साथ ही भारत जैविक खेती में एक आदर्श राष्ट्र भी होगा। ●

अकादमी के प्रकाशन

देश-भर के ख्यातिप्राप्त सृजनधर्मी शब्द-शिल्पियों के साथ-साथ
उदीयमान प्रतिभाओं की सशक्त लेखनी का संयुक्त मंच

इन्द्रप्रस्थ भारती

साहित्य-संस्कृति की समग्र त्रैमासिकी

हिन्दी भाषा और साहित्य के उन्नयन-हेतु सतत प्रयत्नशील

हिन्दी अकादमी, दिल्ली

द्वारा प्रकाशित एक ऐसी सम्पूर्ण त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका जो सहज मानवीय संवेदनाओं, उदात्त जीवन-मूल्यों तथा राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का अनूठा संगम और हर वर्ग के पाठक-समुदाय की अपेक्षाओं के अनुकूल पठनीय एवं संग्रहणीय है।

लगभग एक सौ छिहत्तर पृष्ठ
मूल्य : एक प्रति 25/- रुपये
वार्षिक 100/- रुपये • त्रैवार्षिक 300/- रुपये

सुरुचि सम्पन्न स्वस्थ सकारात्मक अभिव्यक्ति की सूत्रधार 'इन्द्रप्रस्थ भारती' के स्थायी सहभागी बनें। आज ही अपना वार्षिक शुल्क सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली के नाम मनीऑर्डर/चैक (स्थानीय) द्वारा भेजकर सदस्यता प्राप्त करें।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें -

डॉ.हरिसुमन बिष्ट

सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली
समुदाय भवन, पदम नगर, किशन गंज, दिल्ली-110007
दूरभाष : 23690274, 23693118, 23694562, फैक्स : 23696897
E-mail : hindiacademy_delhi@rediffmail.com
hindiacademydelhi@gmail.com

डेवलेपमेंट का बोझ ढोने को अभिशप्त आदिवासी

डॉ. प्रमोद मीणा

यों तो पर्यावरण और वन मंत्रालय केंद्र सरकार के लिए हमेशा सजावटी मंत्रालय ही रहता आया है किंतु पिछले कुछ सालों से यह मंत्रालय विवादों और चर्चाओं के केंद्र में रहा है। इस मंत्रालय पर जहां कुछ उद्योगपतियों और मंत्रियों ने विकास के रास्ते में अड़ंगा लगाने के आरोप लगाये हैं, तो वहीं इस मंत्रालय के विरुद्ध अपने नजदीकी पूंजीपतियों का रास्ता निष्कंटक बनाने की शिकायतें भी सुनने में मिलती रही हैं। पूर्व केंद्रीय पर्यावरण मंत्री ने भी अभी हाल में जिस प्रकार राहुल गांधी के अनुचित हस्तक्षेप की शिकायत करते हुए सोनिया गांधी को जो पत्र लिखा है, उससे भी साफ संकेत मिल जाते हैं कि मंत्रालय में आर्थिक विकास परियोजनाओं को हरी झंडी दिये जाने को लेकर काफी खींचतान चलती रहती है। वास्तव में इन सारे विवादों के मूल में है- प्रकृति और विकास के द्वंद्वात्मक रिश्तों का झगड़ा। राष्ट्र अपने आर्थिक विकास की स्वप्निल परियोजनाओं को किसी भी कीमत पर पूरा करके वैश्विक स्तर पर आर्थिक शक्ति बनना चाहता है जबकि मंत्रालय की स्थापना ही प्रकृति की कीमत पर होने वाले आर्थिक विकास पर लगाम लगाने के लिए हुई है। यह मंत्रालय सिर्फ पर्यावरण के स्वास्थ्य के लिहाज से ही महत्वपूर्ण नहीं है अपितु अपने पूरे अस्तित्व और संस्कृति के लिए प्रकृति पर निर्भर आदिवासी समुदायों के हित भी इस मंत्रालय से संबद्ध हैं। प्रकृति को खतरे में डालकर मंजूर की जाने वाली आर्थिक गतिविधियों से आदिवासियों का पूरा जीवन ही दांव पर लगा हुआ है।

इस मंत्रालय की शुरुआत 1980 में बिना किसी लटके-झटके के एक विभाग के रूप में हुई थी। बाद में स्कॉटलैंड में मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठी में भारत की भागीदारी के बाद 1985 में यह विभाग एक मंत्रालय के रूप में स्थापित

निजाम बदलने के साथ ही प्रगति और प्रकृति के बीच जारी गर्मागर्म बहस में और भी ज्यादा उबाल आ गया है, क्योंकि 'मेक इन इंडिया' का नारा देते हुए केंद्र सरकार ने आर्थिक प्रगति की अपनी महत्वाकांक्षाओं से कोई भी समझौता न करने का वायदा जगजाहिर कर दिया है। प्रचंड बहुमत से सत्ता में आई नयी सरकार को विकास परियोजनाओं से प्रभावित होने वाले लोगों की अब कोई परवाह नहीं रह गयी है, लगता है वह तो इन्हें विकास के मार्ग का कांटा मान चुकी है।

हो गया। स्कॉटलैंड की उस गोष्ठी में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हिस्सेदारी और प्रोत्साहन से ही इस मंत्रालय का जन्म हो पाया था। इस प्रकार यह मंत्रालय वैश्विक स्तर पर सरकार के संवेदनशील और पर्यावरण हितैषी चेहरे को सामने रखने का एक माध्यम था। आज भारत में पर्यावरण और उसके नियमन को लेकर ढेरों कानून हैं। और आज स्थिति यह है कि इन कानूनों के क्षेत्राधिकारों को लेकर भी बहुधा जमीनी स्तर पर कई प्रकार की व्यावहारिक समस्याएं पैदा हो जाती हैं। और कई बार जानबूझकर पर्यावरण कानूनों पर विकास की गाड़ी को पटरी से उतारने के भ्रामक आरोप भी लगाये जाते हैं।

पर्यावरण विषयक प्रावधानों और नियामक संस्थाओं की अक्षमता के चलते सर्वोच्च न्यायालय को बारंबार अधिसूचनाएं जारी करनी पड़ी हैं और तब जाकर अंततः 2010 में राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण अस्तित्व में आ पाया था। यह न्यायाधिकरण अपने पूर्ववर्ती राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण की अपेक्षा कहीं ज्यादा सक्रिय और प्रभावशाली है। यद्यपि अपने निर्देशों के परिपालन विषयक पर्याप्त बाध्यकारी ताकतें इसके पास भी नहीं हैं लेकिन फिर भी औद्योगिक घरानों और पूंजीवादी निगमों की आंखों में यह न्यायाधिकरण शुरू से खटकता रहा है क्योंकि कई अवसरों पर इसने औद्योगिक परियोजनाओं के पैरोकारों और निवेशक कंपनियों से बहुधा असुविधाजनक प्रश्न पूछकर उनकी मंशाओं पर से पर्दा उठाया है। विकास परियोजनाओं के विनाशक परिणामों की काफी सटीकता से छानबीन की है।

निजाम बदलने के साथ ही प्रगति और प्रकृति के बीच जारी गर्मागर्म बहस में और भी ज्यादा उबाल आ गया है, क्योंकि 'मेक इन इंडिया' का नारा देते हुए केंद्र सरकार ने आर्थिक प्रगति की अपनी महत्वाकांक्षाओं से कोई भी समझौता न करने का वायदा जगजाहिर कर दिया है। प्रचंड बहुमत से सत्ता में आई नयी सरकार को विकास परियोजनाओं से प्रभावित होने वाले लोगों की अब कोई परवाह नहीं रह गयी है, लगता है वह तो इन्हें विकास के मार्ग का कांटा मान चुकी है। यद्यपि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के केंद्रीय मंत्री प्रकाश जावड़ेकर बारंबार आश्वासन दिलाते रहे हैं कि विध्वंसक विकास को कहीं स्वीकृति नहीं दी जायेगी किंतु भूमि अधिग्रहण अधिनियम और खान-खनन अधिनियम आदि में प्रस्तावित बदलावों को लेकर जो अध्यादेश लाये गये हैं, उनसे सरकार की कथनी और करनी का फर्क साफ दिखायी देता है।

आज सारे देश भर में उन परियोजनाओं के खिलाफ लोगों में आक्रोश है और वे आंदोलनरत हैं, जो परियोजनाएं लोगों में विस्थापन की आशंका पैदा करती हैं, जिनसे लोग अपनी भूमि और आजीविका से वंचित किये जा रहे हैं, और बदले में प्रभावित लोगों को जहां कोई समुचित विकल्प भी मुहैया नहीं कराया जा रहा है। अभी तक आर्थिक विकास के नक्शे में उपेक्षित रहे पूर्वोत्तर पर भी नीतिनिर्माताओं की नजर लग गयी है, अब वह भी विशाल जलपरियोजनाओं का युद्धक्षेत्र बनने जा रहा है। इस पूरे परिदृश्य में पर्यावरण संरक्षण और लोगों की आजीविका को बचाये जाने के मुद्दे पृष्ठभूमि में धकेल दिये गये हैं और निगमीय अर्थव्यवस्था के खिलाड़ियों के हितों को वरीयता दी जा रही है। स्पष्ट है कि शक्ति के इस द्वंद्व में प्रकृति पर निर्भर रहने वाले आदिवासियों की पराजय निश्चित है। वाणिज्यिक मुनाफे के सामने आदिवासियों की हैसियत ही क्या है!

ऐसे संकेत मिलने लगे हैं कि सरकार वनाधिकार कानून को प्रभावहीन करने का मानस बना चुकी है। गत अगस्त माह में ही पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (मंत्रालय के नाम में 'जलवायु परिवर्तन' शब्द अभी और जुड़ गया है) ने छह वन कानूनों की समीक्षा हेतु मंत्रालय के एक पूर्व सचिव की अगुवाई में एक उच्च स्तरीय समिति गठित कर दी थी। चूंकि समिति की रपट ने पर्यावरण हितैषियों और आदिवासी सामाजिक संगठनों में व्यापक असंतोष पैदा किया है अतः अब यह रपट पर्यावरण के मुद्दे देखने वाली स्थायी संसदीय समिति के पास समीक्षाधीन है। संसदीय समिति देश के शीर्षस्थ पर्यावरविदों के साथ उनकी आशंकाओं पर एक दौर की सुनवाई कर चुकी है।

उच्च स्तरीय समिति की रपट देखने से पता चलता है कि इस समिति ने नियामक प्रक्रिया और इसे अंजाम देने वाले तंत्र पर सीधे-सीधे निशाना साधा है। समिति का एक मात्र तार्किक सुझाव जीएम फसलों (संशोधित आनुवंशीय फसलों) के खतरों पर व्यक्त अपनी चिंताओं को लेकर है। वास्तव में समिति की यह पूरी रपट जिस परिकल्पना पर आधारित है, रपट उस पूर्व परिकल्पना से इतर दिशा में रतौंधी के रोगी की तरह दृष्टिभ्रम का शिकार हो गयी है। रपट निर्माता अपनी छानबीन आरंभ करने से पूर्व ही इन निष्कर्षों पर पहुंच चुके थे कि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के समक्ष प्रस्तुत विकास परियोजनाओं की जांच और मंजूरी विषयक प्रक्रिया गंभीर खामियों से ग्रस्त है और काफी ज्यादा वक्त बर्बाद करने वाली है। रपट की यह पूर्व परिकल्पना सही है या गलत, यह अलग मुद्दा है। किंतु रपट को तो अपनी इस पूर्व परिकल्पना के आधार पर स्वयं को जांच-मंजूरी प्रक्रिया की खामियों पर केंद्रित करना चाहिए था और इस पूरी प्रक्रिया को चुस्त-दुरुस्त बनाने को लेकर सुझाव दिये जाने चाहिए थे। किंतु रपट में तो मंजूरी प्रक्रिया पर उंगुली उठाने की बजाय पर्यावरण कानूनों को ही सिरे से खारिज करने का प्रयत्न किया गया है। यह रपट तैयार करने वाली उच्च स्तरीय समिति को तो विकास परियोजनाओं का वृत्तीय अध्ययन करना चाहिए था, न कि पर्यावरण कानूनों की समीक्षा में हाथ-पैर मारने चाहिए थे।

अगर समिति विकास परियोजनाओं और उनकी मंजूरी प्रक्रिया का वृत्तीय अध्ययन करके अपेक्षित अनुशंसाएं करने का लक्ष्य रखती, तो निःसंदेह मंत्रालय से प्राप्त दो महीनों के अतिअल्प समय में यह कार्य नहीं किया जा सकता था। ध्यातव्य है कि पर्यावरण कानूनों की समीक्षा मात्र में भी समिति को एक महीने का अतिरिक्त समय देना पड़ा है। स्पष्टतः मंत्रालय विकास परियोजनाओं की त्वरित मंजूरी को सुगम बनाने के नाम पर पर्यावरण कानूनों में सरकार की आर्थिक नीतियों के अनुसार अपेक्षित फेरबदल का मानस पहले ही बना चुका था। वह समिति के कंधों पर बंदूक रखकर कहीं पर नजरें और कहीं पर निशाने का खेल खेल रहा है। मंत्रालय की ओर से समिति को स्पष्ट निर्देश भी थे कि वह वर्तमान की आवश्यकताओं और लक्ष्यों के मद्देनजर पर्यावरण कानूनों में समुचित संशोधनों की संभावनाओं पर विचार करे। पूंजीवादी कॉरपोरेट के कांधों पर सवार होकर सत्ता में आयी सरकार की मंशा अब किसी से छिपी नहीं है। अतः सरकार के सामने अपनी

आवश्यकताओं और लक्ष्यों को लेकर कोई भ्रम नहीं है। और आम जनता को भी इस बारे में कोई गलतफहमी अब नहीं पालनी चाहिए। पर्यावरण मंत्रालय का लक्ष्य अब पर्यावरण कानूनों की क्षमता और दायरों को व्यापक बनाना नहीं है और न पर्यावरण का संरक्षण करना ही उसकी प्राथमिकता में शेष रह गया है। उसकी वरीयता तो अब इन कानूनों की बांहें मरोड़कर प्रस्तावित विकास परियोजनाओं की द्रुत मंजूरी सुनिश्चित करना है।

समिति की कार्यप्रणाली पर भी काफी लोगों ने अपनी आपत्तियां दर्ज की हैं। एक आम धारणा यह है कि समिति ने राज्य सरकारों, विकास परियोजनाओं से प्रभावित लोगों और विषय विशेषज्ञों से पर्याप्त विचार-विमर्श नहीं किया। समिति ने तो सिर्फ मंत्रालय के दिशा-निर्देशों के अनुसार खानापूर्ति मात्र की है। यद्यपि समिति का दावा है कि उसने उपलब्ध समय सीमा में अपना सर्वश्रेष्ठ करने का भरसक प्रयास किया है। लेकिन वास्तविकता तो यही है कि जो समिति को करना चाहिए था, उसमें वह पूर्णत: असफल रही है। अगर आपको पर्याप्त समय ही नहीं दिया गया था, तो आपको इतना गुरुगंभीर दायित्व हाथ में ही नहीं लेना था। और न आपको सरकार की परोक्ष मंशाओं और रणनीतियों के समक्ष घुटने ही टेकने थे।

समिति की रपट में सबसे आपत्तिजनक है एक ऐसे पर्यावरण कानून प्रबंधन अधिनियम की प्रस्तावना रखना जिसमें पर्यावरण विषयक अपराधों को नये सिरे से पुन: परिभाषित किया गया है। अपनी परियोजनाओं पर पर्यावरण मंजूरी चाहने वाले आवेदकों से अपेक्षा की गई है कि वे ईमानदार और विश्वसनीय हों। उनकी नेकनीयती संबंधी वैधानिक प्रावधान भी इस कानून में जोड़ा गया है। लेकिन जब रपट स्वयं ही साफ यह कहती हो कि हमारे व्यापारी और उद्यमी ईमानदारी की कसौटी पर प्राय: खरे नहीं उतरते तब आपकी यह आशा ही बेतुकी है कि वे अपने परियोजना प्रस्तावों में व्यावसायिक नैतिकता और भलमानसता का सच्चाई के साथ निर्वाह करेंगे। रपट विकास परियोजना के आवेदनकर्ता की स्वघोषित नैतिकता और भलमानसता की बिना पर उसके प्रस्ताव को स्वीकृति देने की अनुशंसा करती है। यद्यपि परियोजना स्वीकृति और क्रियान्वयन उपरांत भी अगर आवेदक की जालसाजी उजागर होती है, तो उसके खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई का प्रावधान भी इसमें रखा गया है। किंतु ऐसे भ्रष्ट उद्योगपति और पूंजीपति को जेल भेजने या सख्त आर्थिक दंड वसूलने पर भी नष्ट हो चुकी पारिस्थितिकी के साथ कभी भी न्याय नहीं कर पायेंगे।

यह उच्च स्तरीय समिति राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण की भूमिका को भी कमजोर करती है। समिति अनुशंसा करती है कि इस न्यायाधिकरण को अपीलीय समितियों द्वारा लिये गये निर्णयों की न्यायिक समीक्षा करने तक ही सीमित रखना चाहिए। इस रपट में विशेष पर्यावरण न्यायालयों और नई एजेंसियों की प्रस्तावना है जिसके अनुसार केंद्र और राज्य स्तर की वर्तमान पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण समितियों के स्थान पर पर्यावरण प्रबंधन प्राधिकरण का गठन प्रस्तावित है। ध्यातव्य है कि केंद्र और राज्य सरकारों की पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण समितियां अपनी अक्षमताओं और भ्रष्टाचार के लिए कुख्यात रही हैं। लेकिन नये प्राधिकरणों के द्वारा इन पुरानी समितियों को विस्थापित करने मात्र से प्रशासनिक कार्यकुशलता और ईमानदारी की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? इस रपट को लेकर अगर जागरूक नागरिक जमात में तमाम आशंकाएं और डर पैदा हो गया है, तो यह स्वाभाविक ही है।

श्री जावड़ेकर का कहना है कि यह रपट ऐतिहासिक महत्व की है। उन्हें लगता है कि रपट में पर्यावरण संरक्षण और प्रगति के प्रति प्रतिबद्धता के मध्य संतुलन बैठाने की कवायद को बल मिला है। किंतु आलोचकों का तर्क है कि यह रपट देश के पर्यावरण नियमों के मूल में निहित आधारभूत वैधानिक संरचना को विघटित करने का बीड़ा उठाये है। वास्तव में यह रपट संविधान के अनुच्छेद 21 का खुला उल्लंघन है जो नागरिकों से शुद्ध हवा-पानी और पारिस्थितिकीय संतुलन का वायदा करता है। यह रपट सरकार के सामने नीतिगत और राष्ट्रीय महत्व की परियोजनाओं को जन सुनवाई से मुक्त रखने का सुझाव देती है। साथ ही यह पहले से ही प्रदूषण की भयावहता झेल रहे इलाकों में भी जनसुनवाई समाप्त कर देने की पक्षधर है। इसप्रकार के पर्यावरण विरोधी और जन विरोधी सुझाव के पीछे समिति का कुतर्क है कि इन क्षेत्रों में चूंकि स्थिति और ज्यादा बदतर हो ही नहीं सकती अत: प्रभावित होने वाले लोगों की समस्याएं सुनने में समय जाया करना व्यर्थ है। ऊर्जा क्षेत्र और कोयला खनन परियोजनाओं के लिए समिति की रपट विशेष प्रक्रिया के माध्यम से 'त्वरित कार्रवाई' की सिफारिश करती है। यद्यपि रपट में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि 'त्वरित कार्रवाई' के क्या मायने हैं? संभवत: समिति की मंशा इन परियोजनाओं को भी शीघ्रातिशीघ्र पर्यावरणीय मंजूरी दिलवाने के लिए जनसुनवाई और ग्राम सभाओं की स्वीकृति की अनिवार्यता से छूट देने की है। वास्तव में जिस प्रकार से पर्यावरणीय मंजूरी की पूरी प्रक्रिया में संशोधनों की अनुशंसा यह रपट करती है, वैसे में पर्यावरणीय मंजूरी दी जाना सिर्फ एक खानापूर्ति बनकर रह जायेगा।

समिति की यह रपट जिस प्रकार विकास परियोजना पर सार्वजनिक सुनवाई की अनिवार्यत को यथासंभव हटाने या न्यूनतम करने के पक्ष में है, वह नौकरशाही और तकनीकी तंत्र की संवेदनहीनता और जनता के प्रति उनकी अवहेलना और दंभ को दर्शाता है। यह रपट विकास परियोजनाओं के सकारात्मक और नकारात्मक पक्षों पर व्यापक विचार विमर्श की लोकतांत्रिक संभावनाओं के अवसरों पर पूर्ण विराम लगा देना चाहती है। राष्ट्रीय महत्व और नीतिगत मसलों का हवाला देकर प्रभावित लोगों की आवाज न सुनना कहां तक तार्किक है? विकास परियोजनाओं पर संबद्ध क्षेत्र की ग्राम सभाओं के साथ व्यापक विचार-विमर्श से बचना और उनकी अस्वीकृति की खुले आम उपेक्षा करना संविधान की उस मूल अवधारणा की धज्जियां उड़ाना है जो लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण पर बल देती हैं। यह रपट केंद्रीकरण की रौ में बहते हुए ग्राम सभाओं की भूमिका सीमित करने का सुझाव देती है।

समिति की रपट चाहती है कि निषिद्ध वन्य क्षेत्र के दायरे को संकुचित करके उसकी परिभाषा में सिर्फ सत्तर फीसदी छतनार वृक्षों वाले जंगलों को रखा जाये। ध्यातव्य है कि संरक्षित वन्य क्षेत्र भी इसी निषिद्ध वन्य क्षेत्र में आता है। सत्तर फीसदी छतनार वृक्षों वाला वन्य क्षेत्र बहुत घना वन्य क्षेत्र होता है और इसी कारण इस निषिद्ध वन्य क्षेत्र में देश के कुल वन्य क्षेत्र का नगण्य सा हिस्सा ही सम्मिलित हो पायेगा। स्पष्ट है कि रपट निषिद्ध वन्य क्षेत्र की पूरी अवधारणा का मखौल उड़ाती है। आज का मध्यम और अल्प छतनार वृक्षों वाला वन्य क्षेत्र भी निश्चय ही किसी समय घना जंगल रहा करता था लेकिन मानवीय गतिविधियों की अति सक्रियता के कारण वह नष्ट होता चला गया है। ऐसे में हमें क्या इस उजड़ रहे वन्य क्षेत्र को पुनर्जीवित नहीं करना चाहिए या इस नष्ट होते जंगल को निषिद्ध क्षेत्र के दायरे से बाहर रख खुली छूट का शिकार होने के लिए अपने हाल पर छोड़ देना चाहिए? सामान्य स्वार्थ बुद्धि को दूसरा रास्ता उपयुक्त लग सकता है किंतु प्रकृति प्रेमी आदिवासी संस्कृति कभी ऐसा सोच भी नहीं सकती।

वन्य भूमि को गैर वन्य उपयोग वाली भूमि में तब्दील करने की क्षतिपूर्ति के रूप में रपट वृक्षारोपण के साथ-साथ क्षतिपूर्ति के कुल वर्तमान देय में वृद्धि का सुझाव देती है। लेकिन वृक्षारोपण से क्षतिपूर्ति की पूरी अवधारणा ही

संदिग्ध है। चूंकि जब आप एक बार किसी वन्य क्षेत्र को गैर वन्य उपयोग वाली भूमि में रूपांतरित कर देते हैं तो पूरा पारिस्थितिकीय संतुलन गड़बड़ा जाता है। और प्रकृति की बिगड़ चुकी व्यवस्था को दुरूस्त करना लगभग नामुमकिन ही है। इसीलिए वन्य भूमि के गैर वन्य उपयोग पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगना चाहिए, ऐसी किसी भी परियोजना को खारिज किया जाना चाहिए। क्षतिपूर्ति के रूप में वृक्षारोपण तो सिर्फ अंतिम विकल्प ही हो सकता है।

113 पृष्ठ की इस रपट में त्वरित मंजूरी के संदर्भ में 'गति' शब्द का तेरह बार प्रयोग किया गया है। स्पष्ट है कि समिति की रपट की मुख्य चिंता पर्यावरण संरक्षण न होकर बहुत ज्यादा समय लेने वाली स्वीकृति प्रक्रिया पर केंद्रित है। सार्वजनिक परियोजनाओं की सुनवाई में जन भागीदारी को रोकने की अनुशंसा के साथ-साथ यह रपट यह भी सुझाती है कि जन सुनवाई में कौन हिस्सेदारी कर सकता है और कौनसे मुद्दे उस सुनवाई में उठाये जा सकते हैं। रपट के अनुसार जनसुनवाई में सिर्फ पर्यावरण, पुनर्वास और पुनः स्थापना विषयक प्रश्नों पर बहस की जा सकती है जबकि पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन अधिसूचना (2006) सार्वजनिक विचार-विमर्श की प्रक्रिया में सभी लोगों को सक्रिय हिस्सेदारी करने का अधिकार देती है। रपट उस भ्रामक रूढ़ मान्यता पर ही बल देती है कि पर्यावरणविद् विकास के रास्ते में बाधक होते हैं। यह रपट सुनवाई में वास्तविक जनता की ही भागीदारी होने पर बल देती है किंतु क्या जन सुनवाई में जनता की वास्तविक भागीदारी भी नीति नियंताओं के लिए संदेह का क्षेत्र है?

समिति अपनी रपट में देश के वर्तमान वन कानूनों को अक्षम, जटिल होने और परस्पर आच्छादित क्षेत्राधिकार रखने के आधार पर इन सबको एक नये वन कानून की ज़द में लाने की सिफारिश करती है- पर्यावरणीय कानून प्रबंधन अधिनियम। यह प्रस्तावित अधिनियम अति व्यापक चरित्र रखता है जो संसद द्वारा पारित विभिन्न वन्य कानूनों की स्वायत्तता का हनन है। ये विभिन्न कानून अलग-अलग वर्गों, समुदायों और पक्षों की आशंकाओं, समस्याओं को विचारने और उनके हितों का संरक्षण करने के लिए बनाये गये हैं। अगर इन सब कानूनों को एक सर्वशक्तिसंपन्न अधिनियम के अंतर्गत ला दिया जाता है तो यह उन समस्त समुदायों के साथ विश्वासघात होगा जिनके सुदीर्घ आंदोलनों और संघर्षों से ही इन विभिन्न वन्य कानूनों का जन्म हो पाया था। और फिर प्रस्तावित पर्यावरणीय कानून अधिनियम तो विकास परियोजनाओं की सहज त्वरित मंजूरी को

'मेक इन इंडिया' का नारा उद्योगों को उनके देय का वायदा तो करता है, लेकिन उन लाखों–करोड़ों हाशिये के समुदायों के साथ सौतेला व्यवहार जारी रहने देता है जो नीतिगत स्तर पर उपेक्षित रहे हैं, जिनसे विकास के नाम पर उनकी जीवन–रेखा ही छीनी जाती रही है।

सुनिश्चित करने वाला प्रबंधन कौशल मात्र है। इस प्रस्तावित अधिनियम में पर्यावरण संरक्षण, वन्यजीव संरक्षण और आदिवासी हित संवर्धन को लेकर कहीं कोई फिक्र नहीं दिखाई देती।

पर्यावरण के विषयों पर कार्यरत स्वयंसेवी संगठन 'ग्रीनपीस' को मिलने वाले वित्तीय अनुदानों पर सरकार ने जिस प्रकार पाबंदी लगाई और महान में होने वाले कोयला खनन पर विदेश में बोलने जा रहे पर्यावरणविद् कार्यकर्ता को जिस प्रकार रोका गया है, इन सबसे साफ संकेत है कि सरकार असहमति के तनिक से स्वर को भी बर्दाश्त करने की मानसिकता में नहीं है। लोकतांत्रिक बहस और विसंवादी स्वरों की सुनवाई में उसे तनिक भी विश्वास नहीं है। पिछले साल स्वयंसेवी संगठनों पर आई खुफिया विभाग की रपट से ही केंद्रीय सत्ता की रणनीति तय हो गई थी कि वह वर्तमान सरकार द्वारा स्वीकृत द्रुत आर्थिक विकास पथ पर उंगुली उठाने वाले हाथों को तोड़ देगी, आंदोलनों को कुचल देगी। प्रधानमंत्री के अपने गृह राज्य गुजरात के कच्छ जिले में स्थित टाटा पावर की 4000 मेगावॉट की अल्ट्रा मेगा पावर परियोजना के कारण मुंद्रा और अंजार इलाकों में मछुआरा समुदाय को विस्थापित होना पड़ा है किंतु फिर भी सरकार ने उन्हें परियोजना प्रभावित आबादी का दर्जा नहीं दिया है। उड़ीसा में कोयला खनन पर ग्राम सभाओं की तमाम आपत्तियों पर भी ध्यान नहीं दिया गया है। अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत लोगों के पास अब एक ही रास्ता शेष बचता है न्यायालय का या राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण का दरवाजा खटखटाना। किंतु कई अवसरों पर न्यायालय के आदेशों की अवहेलना होते भी देखी जा सकती है।

आदिवासी मामलों का मंत्रालय वनाधिकार कानून को लागू करवाने वाला केंद्रीय अभिकरण है। आदिवासी मंत्रालय काफी सख्त भाषा में पर्यावरण मंत्रालय को पत्र लिखता रहा है जिसमें उसका पूरा बल इस बात को स्पष्ट करने में होता है कि वनाधिकार कानून के कारण परियोजनाओं की स्वीकृति में विलंब नहीं होता। परियोजना स्वीकृति के लिए निर्धारित विविध स्तरीय प्रक्रिया ही वास्तव में अच्छा खासा समय खा जाती है। किंतु त्वरित मंजूरी की अनुशंसा करते हुए भी सार्वजनिक सुनवाई के साथ कोई समझौता नहीं किया जा सकता।

सरकारी और निजी विकास परियोजनाओं के कारण विस्थापित होने वालों का एक विशाल हुजूम आज हमारे देश में दर-दर की ठोकरें खा रहा है। मध्य प्रदेश में बार्गी बांध के कारण वहां के किसान अपने घरों-खेतों से विस्थापित हुए हैं। कल तक जिन जंगलों में बैगा आदिवासी खेलते-कूदते, शिकार करते अपनी सभ्यता-संस्कृति का संरक्षण करते थे, उन्हीं जंगलों से उन्हें बेदखल कर दिया गया है। इन विस्थापितों में एक नयी श्रेणी पर्यावरण विस्थापितों की और जुड़ गयी है। ये लोग समुद्र के जल स्तर के ऊपर चढ़ने, फसल चक्र के गड़बड़ाने, ऋतुओं की अनियमितता आदि के कारण अपने अधिवासों को छोड़ने के लिए मजबूर हो रहे हैं।

औद्योगिक उत्पादन आधारित आर्थिक तरक्की का जो रास्ता आज केंद्र और राज्य सरकारें चुन चुकी हैं, वह विकास की अंधी सुरंग की ओर ले जाता है। किंतु टिकाऊ विकास के लिए चाहिए गंभीर प्रतिबद्धता, स्थानीय स्तर पर साधनों का सृजन और अपेक्षित त्वरित कार्रवाई। अनुत्क्रमणीय पर्यावरण परिवर्तनों के दुष्प्रभावों से बचने के लिए तुरंत समुचित कदम उठाना आवश्यक है। किंतु उच्च स्तरीय समिति पर्यावरण में होने वाले नकारात्मक बदलावों पर चुप्पी लगा गयी है। सचमुच यह विस्मित करने वाला है कि देश के कर्णधार आर्थिक विकास के लक्ष्यों को साधने की उतावली में पर्यावरण कानूनों को दुर्बल कर देने को तत्पर हैं जबकि पर्यावरण के स्वास्थ्य के साथ किये जाने वाले खिलवाड़ के नतीजों की ओर नहीं देखना चाहते। 'मेक इन इंडिया' का नारा उद्योगों को उनके देय का वायदा तो करता है, लेकिन उन लाखों-करोड़ों हाशिये के समुदायों के साथ सौतेला व्यवहार जारी रहने देता है जो नीतिगत स्तर पर उपेक्षित रहे हैं, जिनसे विकास के नाम पर उनकी जीवन-रेखा ही छीनी जाती रही है। लेकिन जिंदा कौमें एक हद के बाद विद्रोह अवश्य करती हैं और आदिवासी वही जिंदा कौम है अतः सरकार को अपनी हदें पार करने से पहले एक बार फिर अपनी नीतियों पर तनिक ठहरकर विचारना चाहिए।

-लेखक पाण्डिचेरी विश्वविद्यालय में एसिसटेंट प्रोफेसर हैं

विदेशी बाजार में आयुर्वेद का कारोबार

कृषि चौपाल

भारत की आयुर्वेदिक दवा निर्माता कंपनियों को स्वामी रामदेव का सर्वाधिक शुक्रगुजार होना चाहिये, जिनके द्वारा योग तथा आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार वैश्विक स्तर पर किये जाने के फलस्वरुप इन कंपनियों को भू-मंडलीकृत होने का मौका मिल गया है। गौरतलब है कि स्वामी रामदेव ने भारतीय योग तथा आयुर्वेदिक उपचार पद्धति को अपने प्रयासों से पहले भारत में और फिर भारत से बाहर अपने संसाधनों से प्रचारित-प्रसारित किया। विगत एक दशक के दौरान भारतीय योग और आयुर्वेद के प्रति दुनिया के प्रत्येक मुल्क में लोगों की दिलचस्पी बढ़ी है। इसका अप्रत्यक्ष फायदा भारत की अनेक आयुर्वेदिक दवा निर्माता कंपनियों को अपना व्यापार तथा विपणन विदेशी मुल्कों तक बढ़ाने में मिला है। वर्तमान में हिमालया, बैद्यनाथ, डाबर, झंडू आदि आयुर्वेदिक दवा निर्माता कंपनियां हजारों करोड़ रुपयों का कारोबार करने लगी हैं। स्थिति यह है कि वर्तमान में भारत में आयुर्वेदिक दवाओं का उत्पादन व विपणन करने वाली सात हजार से अधिक कंपनियां हैं, जिसमें लाखों लोगों को रोजगार मिला हुआ है। कुछ साल पहले तक आयुर्वेदिक दवाओं को बहुत हीन भावना से देखा जाता था और इसके विपणन व उत्पादन पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था, लेकिन आज हालात बदल चुके हैं। अन्य उत्पादों की तरह आयुर्वेदिक दवाओं के उत्पादन व विपणन के क्षेत्र में भी तेजी से विकास हो रहा है। अब लोग तेजी से आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति से जुड़ रहे हैं तथा आयुर्वेदिक दवाओं के उत्पादकों की संख्या बढ़ रही है। डाबर, हिमालया, बैद्यनाथ, झंडू, ऊंझा आदि भारतीय कंपनियां अब वैश्विक हो गई हैं और इनके द्वारा तैयार दवाओं की ओर भारत ही नहीं, बल्कि दुनियाभर के लोग आकर्षित हो रहे हैं।

भारत से प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की दवाओं का निर्यात विश्व के अनेक देशों जैसे मॉरिशस, फिजी, श्रीलंका, चीन, नेपाल, म्यांमार, सिंगापुर, जापान, इण्डोनेशिया, उत्तरी कोरिया, ताइवान आदि को किया जाता है। गत वर्ष भारत के श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा अकेले 250 करोड़ रुपये की आयुर्वेदिक दवाओं का निर्यात किया गया। जिसे देखते हुए केंद्र सरकार ने आयुर्वेद के विकास के लिए अनेक कार्यक्रम चलाए

हैं और कई राज्यों में आयुर्वेदिक महाविद्यालय खुल चुके हैं।

भारत ही नहीं विश्व के अनेक देशों में देशी चिकित्सा अर्थात आयुर्वेद पर शोध का कार्य प्रगति पर है। भारत में आयुर्वेद के अध्ययन तथा शोध के अलावा मुख्य रूप से मॉरीशस, नेपाल, म्यांमार, श्रीलंका आदि देशों में हो रहा है। श्रीलंका के 'भंडारनायक स्मारक आयुर्वेद संस्थान' में आयुर्वेद के अध्ययन एवं अध्यापन के साथ-साथ शोध कार्य भी हो रहा है। वहां पर मुख्य रूप से आमवात, कामला, वातव्याधि और उदर (पेट) रोगों पर कार्य हो रहा है। नेपाल के 'त्रिभुवन विश्वविद्यालय' में आयुर्वेद संकाय के अंतर्गत आयुर्वेद में स्नातक पाठ्यक्रम के साथ-साथ कुछ प्रारंभिक शोध कार्य भी चल रहा है।

पाश्चात्य देशों में प्राय: उन देशों में पारंपरिक जड़ी-बूटियों के प्रयोग के विषय में कार्य हो रहा है जहां कि अंग्रेजी दवाओं के दुष्प्रभावों पर शोध कार्य हुए हैं। यूरोप के अनेक देशों में वनौषधियां पारंपरिक रुप से उपचार के लिए प्रयोग में चली आ रही हैं। अब ये और भी लोकप्रिय होती जा रही हैं। चेकोस्लोवाकिया में आठ सौ से ज्यादा वनस्पतियों का प्रयोग परंपरा से ही विभिन्न रोगों के इलाज के लिए होता आ रहा है। जिनमें से लगभग 160 वनस्पतियां आधिकारिक तौर पर चिकित्सा तथा स्वास्थ्य के लिए उपयोगी घोषित की गई हैं। चेकोस्लोवाकिया की अनेक आधिकारिक दवा कंपनियों में 15 प्रतिशत दवाऐं विभिन्न औषधीय वनस्पतियों से तैयार की जाती हैं और ये काफी लोकप्रिय भी हैं।

इटली में टोरिनो विश्वविद्यालय से संबद्ध तथा वेलाएरा स्थित आयुर्वेद एवं योग संस्थान के निर्माण का कार्य चल रहा है। इंग्लैंड में 'स्कूल ऑफ हर्बल' नामक संस्थान इस पद्धति में स्नातक तैयार करने तथा वनस्पतियों के औषधीय गुणों के लिए शोध में संलग्न है। रूस में भी योग एवं आयुर्वेद पर अध्ययन में विशेष रुचि ली जा रही है। आयुर्वेदिक दवाओं के उत्पादन तथा प्रचार-प्रसार और शोध आदि पर वर्तमान में बहुत अधिक ध्यान दिया जा रहा है। वर्तमान में यह एक लाभकारी उद्योग के रूप में विकसित हो गया है। ●

प्रमुख आयुर्वेदिक शोध संस्थान व महाविद्यालय

- राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर, राजस्थान
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, पटना
- जे.वी. अष्टांग राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, कोलकाता, पश्चिम बंगाल
- राजकीय देशी चिकित्सा महाविद्यालय, बंगलुरू, कर्नाटक
- राजकीय देशी चिकित्सा महाविद्यालय, मैसूर, कर्नाटक
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम, केरल (दो विभाग)
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, रामपुर, मध्य प्रदेश
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, ग्वालियर, मध्य प्रदेश
- आर.ए. पोद्दार आयुर्वेद महाविद्यालय, मुंबई, महाराष्ट्र
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, ऋषिकुल, हरिद्वार, उत्तराखंड (एक विभाग) रस शास्त्र
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, हैदराबाद, तेलंगाना
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश (दो विभाग)
- जे.डी. आयुर्वेदिक मेडिकल कॉलेज, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, पीलीभीत, उत्तर प्रदेश
- राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, पटियाला, पंजाब
- अखंडानंद राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, अहमदाबाद, गुजरात
- शासकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़।

हरी खादः मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने का सस्ता विकल्प

कृषि चौपाल

मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने के लिए हरी खाद एक सस्ता विकल्प है। सही समय पर फलीदार पौधे की खड़ी फसल को मिट्टी में ट्रेक्टर से हल चलाकर दबा देने से जो खाद बनती है उसको हरी खाद कहते हैं।

आदर्श हरी खाद में निम्नलिखित गुण होने चाहिए-

- उगाने का न्यूनतम खर्च
- न्यूनतम सिंचाई आवश्यकता
- कम से कम पादम संरक्षण
- कम समय में अधिक मात्रा में हरी खाद प्रदान कर सकें
- विपरीत परिस्थितियों में भी उगने की क्षमता हो
- जो खरपतवारों को दबाते हुए जल्दी बढ़त प्राप्त करे
- जो उपलब्ध वातावरण का प्रयोग करते हुए अधिकतम उपज दे।

हरी खाद बनाने के लिये अनुकूल फसलें

- ढेंचा, लोबिया, उरद, मूंग, ग्वार बरसीम, कुछ मुख्य फसले हैं जिसका प्रयोग हरी खाद बनाने में होता है। ढेंचा इनमें से अधिक प्रचलित है।
- ढैंचा की मुख्य किस्में सस्बेनीया ऐजिप्टिका, एस रोस्ट्रेटा तथा एस एक्वेलेटा अपने त्वरित खनिजकरण पैर्टन, उच्च नाइट्रोजन मात्रा तथा अल्प ब्रूछ अनुपात के कारण बाद में बोई गई मुख्य फसल की उत्पादकता पर उल्लेखनीय प्रभाव डालने में सक्षम है।

हरी खाद के पौधो को मिट्टी में मिलाने की अवस्था

- हरी खाद के लिये बोई गई फसल 55 से 60 दिन बाद जोत कर मिट्टी में मिलाने के लिये तैयार हो जाती है।
- इस अवस्था पर पौधे की लम्बाई व हरी शुष्क सामग्री अधिकतम होती है 55 से 60 दिन की फसल अवस्था पर तना नरम व नाजुक होता है जो आसानी से मिट्टी में कटकर मिल जाता है।
- इस अवस्था में कार्बन-नाईट्रोजन अनुपात कम होता है, पौधे रसीले व जैविक पदार्थ से भरे होते है इस अवस्था पर नाइट्रोजन की मात्रा की उपलब्धता बहुत अधिक होती है
- जैसे जैसे हरी खाद के लिये लगाई गई फसल की अवस्था बढ़ती है कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात बढ़ जाता है, जीवाणु हरी खाद के पौधों को गलाने-सड़ाने के लिये मिट्टी की नाइट्रोजन इस्तेमाल करते हैं। जिससे मिट्टी में अस्थाई रूप से नाइट्रोजन की कमी हो जाती है।

हरी खाद बनाने की विधि

- अप्रैल-मई माह में गेहूं की कटाई के बाद जमीन की सिंचाई कर लें। खेत में खड़े पानी में 50 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से ढेंचा का बीज छितरा लें
- जरूरत पढ़ने पर 10 से 15 दिन में ढेंचा फसल की हल्की सिंचाई कर लें।
- 20 दिन की अवस्था पर 25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से यूरिया को खेत में छितराने से नोड्यूल बनने में सहायता मिलती है।
- 55 से 60 दिन की अवस्था में हल चलाकर हरी खाद को पुनः खेत में मिला दिया जाता है। इस तरह लगभग 10-15 टन प्रति हैक्टेयर की दर से हरी खाद उपलब्ध हो जाती है। जिससे लगभग 60-80 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर प्राप्त होता है। मिट्टी में ढेंचे के पौधों के गलने-सड़ने से बैक्टीरिया द्वारा नियत सभी नाइट्रोजन जैविक रूप में लंबे समय के लिए कार्बन के साथ मिट्टी को वापस मिल जाते हैं।

हरी खाद के लाभ

- हरी खाद को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की भौतिक संरचना में सुधार होता है।
- हरी खाद से मृदा उर्वरता की भरपाई होती है।
- पोषण के लिए आवश्यक तत्वों को बढ़ाता है।
- सूक्ष्म जीवाणुओं की गतिविधियों को बढ़ाता है।
- मिट्टी की संरचना में सुधार होने के कारण फसल की जड़ों का फैलाव अच्छा होता है।
- हरी खाद के लिए उपयोग किये गये फलीदार पौधे वातावरण से नाइट्रोजन व्यवस्थित करके नोड्यूल्स में जमा करते हैं जिससे भूमि की नाइट्रोजन शक्ति बढ़ती है।
- हरी खाद के लिये उपयोग किये गये पौधे को जब जमीन में हल चलाकर दबाया जाता है तो उनके गलने-सड़ने से नोड्यूल्स में जमा की गई नाइट्रोजन जैविक रूप में मिट्टी में वापस आ कर उसकी उर्वरक शक्ति को बढ़ाती है।
- पौधों के मिट्टी में गलने-सड़ने से मिट्टी की नमी के जलधारण की क्षमता में बढ़ोतरी होती है। हरी खाद के गलने-सड़ने से कार्बन डाइऑक्साइड गैस निकलती है जो कि मिट्टी से आवश्यक तत्व को मुक्त कराकर मुख्य फसल के पौधों को आसानी से उपलब्ध करवाती है।
- हरी खाद दबाने के बाद बोई गई धान की फसल में ऐकिनोक्लोआ जातियों के खरपतवार न के बराबर होते है जो हरी खाद के ऐलेलोकेमिकल प्रभाव को दर्शाते हैं।

स्वाइन फ्लूः घबराएं नहीं, सजग रहें

स्वाइन फ्लू की रिपोर्टिंग को लेकर इस बार सरकार भी यही कह रही है। मसलन इस साल 15 फरवरी तक दिल्ली में लगभग 1300 से ज्यादा स्वाइन फ्लू के मामले सामने आ चुके हैं पर इसकी वजह से मात्र 6 लोगों की मौत हुई है। हाल ही में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने बताया कि राजधानी दिल्ली में स्वाइन फ्लू के जरा से लक्षण सामने आने पर भी आम लोग अपनी जांच करा रहे हैं। समय पर जांच हो जाने के कारण सही समय पर इलाज भी शुरू हो रहा है। यही कारण है कि इस साल इतने ज्यादा मामले बढ़ने के बावजूद मृत्यु दर कम है। लेकिन इसके उलट इस साल राजस्थान (1631 मामले-130 मौत), गुजरात (1233 मामले-117 मौत), तेलंगाना (969 मामले-45 मौत), महाराष्ट्र (352 मामले-51 मौत) और मध्य प्रदेश में (192 मामले-56 मौत) के मामले सामने आए हैं। लेकिन अगर इस साल के कुल स्वाइन फ्लू के संक्रमित और मार गए लोगों की

कृषि चौपाल

इस साल जनवरी से स्वाइन फ्लू धीरे-धीरे लेकिन व्यापक स्तर पर अपने संक्रमण से परेशान कर रहा है। सवाल यह है कि क्या स्वाइन फ्लू एक गंभीर बीमारी बन चुकी है? या फिर महज एक मौसमी फ्लू है। एक जनवरी से 15 फरवरी के बीच सरकारी आंकड़े बताते हैं कि लगभग 8423 लोग पूरे भारत में स्वाइन फ्लू से संक्रमित हो चुके हैं। दिल्ली, गुजरात, राजस्थान और तेलंगाना समेत पूरे भारत में अब तक लगभग 596 लोग इस संक्रमण के कारण दम भी तोड़ चुके हैं। लेकिन इस संक्रमण को हमें एक अलग नजरिए से देखने की जरूरत है।

पिछले कई हफ्तों से इस बात पर भी बहसबाजी चल रही है कि इस संक्रमण से हो रही मौतों के लिए सरकार जिम्मेदार है या आम नागरिक। अगर इसे सीधे तौर पर देखा जाए तो स्वाइन फ्लू भारत में कोई नई बीमारी नहीं है। सबसे सीधी बात तो यह है कि भारत में 2009 में दस्तक दे चुकी इस बीमारी ने अपना स्वरूप भी नहीं बदला है। इसमें नागरिकों की जगरूकता और सरकार की स्वास्थ्य सेवाएं दुरुस्त होने की दरकार है।

गौरतलब है कि 2009 में सुअरों से इंसानों में प्रवेश करने वाले कीटाणु स्वाइन फ्लू ने पूरी दुनिया में महामारी का रूप लिया था। उस वक्त मैक्सिको से शुरू हुए इस संक्रमण ने पूरे भारत में लाखों लोगों को प्रभावित किया था। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वाइन फ्लू सबसे पहले 1918 में एक संक्रमण के रूप में सामने आया था। ये पहला समय था जब सुअरों के बीच में रहने वाले इंसानों के भीतर इस वायरस ने हमला किया। हालांकि इस वायरस से उतने ज्यादा लोगों की मौत की खबरें सामने नहीं आई थीं। पिछले दशकों में स्वाइन फ्लू के कम मामलों के सामने आने के पीछे बड़ा कारण अंडर रिपोर्टिंग रहा है। मतलब भारत समेत दुनिया के तमाम देशों में अगर स्वाइन फ्लू का संक्रमण बहुत ज्यादा भी रहा होगा, तो भी डॉक्टरों के सामने नहीं आने की वजह से रिपोर्ट नहीं हो पाए होंगे।

फार्म - 8

(नियम 8 देखिए)

1. नाम	:	कृषि चौपाल
2. प्रकाशन-स्थान	:	दिल्ली
3. प्रकाशन-अवधि	:	मासिक
4. मुद्रक का नाम	:	महेन्द्र सिंह बोरा
क्या भारत के नागरिक हैं?	:	हां
यदि विदेशी हैं तो मूल देश का नाम	:	नहीं
पता	:	सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9 वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092
5. प्रकाशक का नाम	:	महेन्द्र सिंह बोरा
क्या भारत के नागरिक हैं?	:	हां
यदि विदेशी हैं तो मूल देश का नाम	:	नहीं
पता	:	सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9 वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092
6. संपादक का नाम	:	महेन्द्र सिंह बोरा
क्या भारत के नागरिक हैं?	:	हां
यदि विदेशी हैं तो मूल देश का नाम	:	नहीं
पता	:	सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9 वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092
7. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो पत्र के स्वामी हों तथा समस्त पूंजी में जिनका हिस्सा हो	:	महेन्द्र सिंह बोरा सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9 वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092

मैं महेन्द्र सिंह बोरा एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

01-03-2015 **महेन्द्र सिंह बोरा**

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वाइन फ्लू को पहचानने के कुछ बड़े ही आसान तरीके हैं। पहला, इसे 'ए-श्रेणी' कहते हैं- अगर किसी व्यक्ति को जुकाम हो रहा हो, नाक बह रही हो, सांस लेने में तकलीफ हो रही हो, गले से ऊपर दर्द और हल्का बुखार हो तो एक बार डॉक्टरी जांच जरूर करा लेनी चाहिए। 'बी-श्रेणी' में ऐसे मरीज आते हैं जिनकी इम्युनिटी बहुत कम होती है और दर्द गले से छाती तक फैला हो और सांस लेने में ज्यादा तकलीफ हो रही हो। तीसरे यानी 'सी-श्रेणी' में ऐसे लोग आते हैं, जो डायबटीज के मरीज हों या फिर 50 साल से ज्यादा उम्र के हों या एचआईवी/एड्स के मरीज हों।

बात करें, तो 2009 और 2010 में हुए मामलों से कोई तुलना नहीं है। मई-दिसंबर, 2009 में स्वाइन फ्लू से लगभग 27236 लोग प्रभावित हुए थे। इनमें से 981 लोगों की मौत भी हुई। इसी तरह 2010 में 20604 लोग संक्रमित हुए और 1763 लोगों ने दम तोड़ा। सरसरी निगाह से इन आंकड़ों को कोई भी देखा, तो पता लग सकता है कि देश में स्वाइन फ्लू के मामलों में बहुत ज्यादा कमी आई।

इलाज की बात करें तो 2009 में बाजार में आई टमीफ्लू ही सबसे कारगर दवा साबित हो रही है। भले गुजरात और राजस्थान में दवाओं की कमी की बात लगातार खबरों में आती रही है। लेकिन केन्द्र और राज्य सरकारों की माने तो ये ही दो ऐसे राज्य हैं, जो न सिर्फ अपने स्थानीय मरीजों तक दवा पहुंचा रहे हैं, बल्कि अन्य राज्यों को भी दवाई मुहैया करा रहे हैं। अब चुनौती इस बात की है कि क्या सरकारी मशीनरी स्वाइन फ्लू से लड़ने में नाकाम हो रही है या आम जनता के बीच जागरूकता की भारी कमी है। अखबारों और टीवी में आ रही खबरों से परे बहुत ही कम लोग जानते हैं कि स्वाइन फ्लू के लक्षण क्या हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वाइन फ्लू को पहचानने के कुछ बड़े ही आसान तरीके हैं। पहला, इसे ए-श्रेणी कहते हैं- अगर किसी व्यक्ति को जुकाम हो रहा हो, नाक बह रही हो, सांस लेने में तकलीफ हो रही हो, गले से ऊपर दर्द और हल्का बुखार हो तो एक बार डॉक्टरी जांच जरूर करा लेनी चाहिए। 'बी-श्रेणी' में ऐसे मरीज आते हैं जिनकी इम्युनिटी बहुत कम होती है और दर्द गले से छाती तक फैला हो और सांस लेने में ज्यादा तकलीफ हो रही हो। तीसरे यानी सी श्रेणी में ऐसे लोग आते हैं, जो डायबटीज के मरीज हों या फिर 50 साल से ज्यादा उम्र के हों या एचआईवी/एड्स के मरीज हों। डॉक्टर और स्वास्थ्य विशेषज्ञ कहते हैं कि पहली श्रेणी का स्वाइन फ्लू आम मौसमी फ्लू जैसा ही है। जिसमें सही खान-पान और आराम करने से अपने आप चला जाता है। दूसरी श्रेणी के लोगों के लिए किसी भी तरह के फ्लू को गंभीरता से लेने की जरूरत होती है और ऐसे लक्षण पाए जाने पर तुरंत डॉक्टरी सलाह लेना जरूरी है। इसके अलावा आखिरी श्रेणी के लोग वो हैं जिन्हें सबसे ज्यादा स्वाइन फ्लू से खतरा हो सकता है। सी श्रेणी के लोगों को हमेशा डॉक्टरी सलाह होती है कि ऐसे किसी भी लक्षण के दिखाई देने पर तुरंत अस्पताल जाएं।

इन सबके बावजूद ज्यादातर फैमिली डॉक्टर सीधी सलाह देते हैं कि स्वाइन फ्लू के संक्रमण के समय भीड़भाड़ वाले इलाके जैसे बाजार, मेला, शॉपिंग मॉल्स, सिनेमा हॉल जैसी जगहों पर जाने से बचें। एक मामूली और महत्वपूर्ण बात यह भी है कि कुछ भी खाने से पहले साबुन से हाथ जरूर धोना चाहिए। सभी राज्य सरकारों ने स्वाइन फ्लू के लक्षण पाए जाने पर मुफ्त जांच की सुविधा सभी स्वास्थ्य केन्द्रों में मुहैया कराई है। इसके अलावा संदेह होने पर भी इन स्वास्थ्य केन्द्रों में जांच के लिए जाया जा सकता है।

इस बार भले स्वाइन फ्लू के मामले में हो-हल्ला बहुत ज्यादा हो रहा हो। लेकिन अभी भी आपकी अपनी जागरूकता और समझदारी ही इससे निबटने में सबसे ज्यादा मदद कर सकती है। स्वाइन फ्लू में एक ही वाक्य सबसे सटीक फिट होता है- जानकारी ही बचाव। ●

कृषि चौपाल पत्रिका डाक से मंगाने के लिए सदस्यता फॉर्म

कृपया उचित स्थान पर सही (✓) का निशान लगाएं और अन्य विवरण साफ-साफ अक्षरों में सही-सही भरें।

☐ वार्षिक सदस्य-180/- ☐ द्विवार्षिक सदस्य-350/- ☐ पंचवार्षिक सदस्य-750/-

☐ आजीवन सदस्य-5100/- (डाक खर्च अलग से देय होगा)

मैं अपना चेक/डिमांड ड्राफ्ट संख्या ..... तिथि ..... / ..... / .....

बैंक व ब्रांच ..... पर आदेशित, रुपये .....

मात्र का (**'कृषि चौपाल'**, दिल्ली के पक्ष में) संलग्न कर रहा हूं।

मेरा विवरण इस प्रकार है:-

नाम .....

पता .....

..... पिन .....

फोन/मोबाइल ..... ई-मेल .....

दिनांक ..... हस्ताक्षर .....

कृपया ध्यान दें: सदस्यता-फॉर्म के साथ चेक या डिमांड ड्राफ्ट 'कृषि चौपाल' के नाम से देय होगा। चेक या ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम, पता व फोन नंबर अवश्य लिखें। डिमांड ड्राफ्ट अथवा मनीऑर्डर- संपादक 'कृषि चौपाल' सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9, वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092 के पते पर भेंजे। फोन: +91-9910406059, ईमेल: E-mail: krishichaupal@gmail.com

जैविक खेती में रोजगार के अवसर

एसोचैम के पूर्व घोषित एक अनुमान के मुताबिक 2015 तक ऑर्गेनिक फॉर्मिम इंडस्ट्री का व्यापार 10 हजार करोड़ रुपए तक पहुंच जायेगा तथा इस दौरान लगभग 5 लाख लोगों को इस इंडस्ट्री में सीधे और अप्रत्यक्ष तौर पर रोजगार मिलने की संभावना है।

कृषि चौपाल

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि मौजूदा दौर में अधिकांश खाद्य पदार्थ और खाद्यान्न अनेक प्रकार के रासायनिक दुष्प्रभावों से युक्त होते हैं। भारत को खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने के लिये सत्तर के दशक में हरित क्रांति का अभियान चलाया गया। हरित क्रांति के दौरान फसल उगाने के लिये कई प्रकार के रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशियों का उपयोग किया गया जो आज भी जारी है। भारत हरित क्रांति के घटित होने के बाद बहुत हद तक अनेक खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गया परंतु अब इस हरित क्रांति के दौरान धुआंधार रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग और कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशियों के उपयोग के दुष्प्रभाव आज दृष्टिगोचर होने लगे हैं। अब भारत में ही नहीं बल्कि विश्व स्तर पर इन दुष्प्रभावों से मुक्ति पाने के लिये एक बार फिर जैविक खेती या ऑर्गेनिक फॉर्मिंग या ऑर्गेनिक खाद्य उत्पादों की बात जोर पकड़ने लगी है।

एसोसिएटेड चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज ऑफ इंडिया (एसोचैम) के पूर्व घोषित एक अनुमान के मुताबिक 2015 तक ऑर्गेनिक फॉर्मिंग इंडस्ट्री का व्यापार 10 हजार करोड़ रुपए तक पहुंच जायेगा तथा इस दौरान लगभग 5 लाख लोगों को इस इंडस्ट्री में सीधे और अप्रत्यक्ष तौर पर रोजगार मिलने की संभावना व्यक्त की गयी है। गौरतलब है कि केंद्रीय कृषि मंत्री राधामोहन सिंह भी विगत दिनों अपने बयानों में अनेक बार जैविक खेती के क्षेत्र को बढ़ावा देने की बात कह चुके है। निवेश के साथ अनेक राज्य सरकारें जैविक खेती पर नई नीतियां लेकर आ रही हैं और कुछ अन्य राज्य सरकारें नई नीतियां लाने की तैयारी कर रही हैं। केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा जैविक खेती के क्षेत्र में दिलचस्पी लेने से इस क्षेत्र में विशेषज्ञों की मांग में तेजी से बढ़ोत्तरी होने की संभावना है। एक अन्य अनुमान के मुताबिक जारी वर्ष के अंत तक अंतर्राष्ट्रीय बाजार के निर्यात क्षेत्र में भारत के जैविक उत्पादों की हिस्सेदारी 3 फीसदी तक होने की संभावना जतायी गयी है।

जैविक खेती क्या है:- औद्योगिक क्रांति और नयी वैज्ञानिक खोजों के बाद अनेक प्रकार की रासायनिक खादें और कीड़ों-मकोड़ों को मारने की दवाईयां तथा फसल को नुकसान पहुंचाने वाले खरपरवारों को नष्ट करने वाली रासायनिक दवाईयों का आविष्कार और निर्माण हुआ। इसमें कोई शक नहीं है कि इनके उपयोग से खाद्यान्न उत्पादन में आशा से अधिक वृद्धि हुई और फसलों का उत्पादन भी कम समय में प्राप्त किया जाने लगा। यहां तक कि आज अनेक क्षेत्रों में धान की वर्ष में तीन-तीन फसलें और गेहूं आदि की दो-दो फसलें भी प्राप्त की जा रही हैं। लेकिन इस प्रकार पैदा की गयी फसलों और खाद्यान्नों के जरिये अनेक रसायन हमारे शरीर में और हमारे पालतू मवेशियों के शरीर में पहुंच गये। इनसे समूचे मानव समुदाय के स्वास्थ्य को तथा मानवों द्वारा पाले जाने वाले पालतू मवेशियों के स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान हुआ। इनके उपयोग से आज जहां मानवों तथा मानवेतर प्राणियों को गंभीर लाइलाज बीमारियां हुई वहीं अनेक पशु-पक्षियों के जीवन को भी गंभीर खतरा उत्पन्न हो गया। यही कारण है कि गरुड़ प्रजाति के अनेक पक्षी आज लगभग विलुप्त हो चुकें हैं। जिन फसलों को जीवांश खाद पोषक तत्वों जैसे गोबर की खाद, हरी खाद, जैविक खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट (केंचुओं से बनने वाली खाद), जैवनाशियों तथा बायोएजेंट के इस्तेमाल से उगाया जाता है। इस प्रकार उगायी जाने वाली फसलों में रसायनों का प्रयोग नहीं किया जाता है। इस प्रकार पैदा की गयी खाद्य-वस्तुओं को ऑर्गेनिक फूड या जैविक खाद्य कहा जाता है। इनमें अनाज, दालें, तिलहन, फल, सब्जियां आदि सभी शामिल हैं।

प्रमुख संस्थान

- चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्व विद्यालय
- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
- इंदिरा गांधी नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली
- पंजाब कृषि विश्व विद्यालय, लुधियाना
- आणंद कृषि विश्व विद्यालय, आणंद, गुजरात
- यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर साइंजेज बेंगलुरू
- एमिटी यूनिवर्सिटी, नौएडा

रोजगार संभावनाएं:- स्वास्थ्य के प्रति विगत दो दशकों के दौरान लोगों का रुझान बढ़ा है। इसी रूझान ने जैविक खाद्य पदार्थों को एक बेहतर रोजगार के विकल्प के तौर पर विकसित करने में मदद की है। आज विश्व स्तर पर अनेक कंपनियां जैविक खाद्य उत्पादों को बाजार में उतार रही हैं। इसी लिये इस क्षेत्र में विशेषज्ञों की मांग में निरंतर बढ़ोत्तरी हो रही है। केवल इन उत्पादों की खेती ही नहीं अपितु इनके उत्पादों के भंडारण, प्रसंस्करण, मूल्य पैकेजिंग और मंडियों तक इनको पहुंचाने की प्रक्रिया जैसे क्षेत्रों में कार्यकुशल कार्मियों की निरंतर आवश्यकता बनी हुई है। इसके अतिरिक्त जैविक शोरूमों और जैविक खादों को बनाने वाली कंपनियों में भी रोजगार की बहुत संभावनाएं विद्यमान हैं। इन क्षेत्रों में भी जैविक खेती विशेषज्ञों, फॉर्म प्रबंधकों, शोधाथियों आदि के प्रमुख पदों पर कार्य करते हुए अच्छी जीवनशैली प्राप्त की जा सकती है।

आवश्यक योग्यताएं:- इस क्षेत्र में कार्य करने के लिये कृषि विज्ञान या विज्ञान विषयों के साथ 10+2 के बाद मृदा विज्ञान, जल प्रबंधन, फसल संरक्षण, पौध-पादप संरक्षण, कटाई आदि तकनीकी की जानकारी होना भी जरूरी है। साथ ही जैविक मानकों की जानकारी, प्रमाणन तथा बाजार का ज्ञान भी होना चाहिये।

मासिक वेतन:- इस क्षेत्र में रोजगार प्राप्त करने वाले को 20 से 25 हजार रुपये मासिक वेतन प्राप्त हो जाता है। हालांकि वेतन कार्मिक की योग्यता पर निर्भर करता है समय और अनुभव के साथ-साथ वेतन में बढ़ोत्तरी भी होते रहती है। जो लोग संसाधन सम्पन्न या संसाधनों को जुटाने की क्षमता रखते हैं वे अपना खुद का कारोबार भी इस क्षेत्र में स्थापित कर सकते है।

ऑर्गेनिक फॉर्मिंग की शिक्षा:- आज के दौर में जैविक खेती और उत्पादों के दिनोंदिन बढ़ते हुए महत्व को देखते हुए देश के कई विश्वविद्यालयों में और निजी तथा सरकारी संस्थानों में ऑर्गेनिक फॉर्मिंग से उपाधियां और डिप्लोमे आदि संचालित किये जा रहे हैं। इन संस्थानों में शोध आदि भी किये जा सकते हैं। इंदिरा गांधी नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी जैसे देशव्यापी संस्थान द्वारा ऑर्गेनिक फॉर्मिंग में सर्टिफिकेट कोर्स भी चलाए जा रहे हैं। इन कोर्सों में दाखिले के लिये भी बारहवीं पास होना जरूरी है। ●

सेंध

■ अतुल मोहन प्रसाद

क्या हुआ? अभी तक आपका धान खरीद केंद्र खुला या नहीं? धान पोसकर कितने दिन रखोगे? रबी की बुआई भी नहीं हुई? कह रहे हो, धान बेचकर ही गेहूं के बीज लाओगे? आखिर कब तक? सारा समय निकल जाएगा, तब? आधे से अधिक किसान अपना धान बेचकर गेहूं की बुआई कर चुके। उनके खेतों के बीज अंखुआ भी गए हैं, दालान में बैठकर बीड़ी का कश ले रहे सकलदीप की तंद्रा उस समय टूटी, जब उसकी मेहारारू ने ढेर सारे सवाल उसके सामने धुंए की तरह उगल दिए।

'देखो! सरकार खाली तो बैठी नहीं है। उसने तो बहुत सारी व्यवस्था की है, किंतु बीच वाले उसे पूरा ही नहीं होने देते। जब तक धान-खरीद-केंद्र काम करना शुरू नहीं करता, तब तक सहकारी समिति और पैक्स को किसानों से सरकारी दर पर ही धान खरीदने को सरकार ने कहा है और बाद में उनसे सरकार ले लेगी।'

'तो उन्हें ही क्यों नहीं दे देते अपना धान?'

'सरकार ने नौ सौ रुपया प्रति क्विंटल दर तय की है ये आठ सौ से आगे बढ़ते नहीं। कहते हैं पता नहीं, सरकार कब खरीदेगी। तब तक हम लोगों की पूंजी फंसी रहेगी और धान का सुखवन जाएगा, वह अलग।'

'तब क्या करोगे? इन्हें बेच दो। सरकार के खरीद-केंद्र खुलने के आसार नजर आ नहीं रहे। जाकर पता करते। दिन-भर बैठे-बैठे बीड़ी सुलगाते रहते हो।'

'ठीक है, जाकर पता करता हूं।'

'दिन पता चल जाए तो ट्रैक्टर भी ठीक करा लेना। तीस-पैंतीस खाली बोरे भी उधार मांगकर ले आना होगा। कम से कम बोरे ही ला देते, तो मैं उनमें भंरकर धान रख देती।'

'जा रहा हूं बाबा। तुम तो एक साथ इतन काम दे देती हो कि...'

'अच्छा, जाओगे या बात ही बनाओगे?'

सकलदीप जैसे कुछ ही किसान धान-खरीद-केंद्र पर धान बेचने के लिए रखे हुए हैं, नहीं तो ज्यादातर किसान अपना धान बेचकर रबी की बुआई कर निश्चिंत हो गए हैं।

सकलदीप को रास्ते में रघुनाथ साह के ट्रैक्टर का ड्राइवर रामदीन मिल गया। उससे ही मालूम हो गया कि धान-खरीद-केंद्र कल से काम करना शुरू कर देगा।

'तब मेरा धान कल पहुंचा दो।' सकलदीप ने कहा।

'कल तो ठाकुर सुमरेन्द्र सिंह का धान पहुंचाना है। उनके पास दो ट्रैक्टर अपना है, किंतु धान तीन ट्रैक्टर ले जाना है। इसलिए कल तो भाई माफ करना।'

'अच्छा, तो परसों चलो।'-सकलदीप उसका पीछा छोड़ने वाला नहीं था।

'ठीक है। तीन सौ रुपया धान-खरीद-केंद्र तक ले जाने का लगेगा।'

'अरे रामदीन, जो सबसे लेते हो, वही हमसे लेना।'

'पहले कह दिया कि कोई झंझट नहीं हो। धान वहां गिराकर मैं चला आऊंगा। अगर रोकोगे तो दो सौ रुपया एक दिन का अलग से लगेगा।'

'तुम धान गिराकर चले आना। परसों दस बजे आ जाना।' ट्रैक्टर तय कर सकलदीप खाली बोरों के लिए भिखारी साह की दुकान के सामने रुक गया। भिखारी साह से बोरों का लेन-देन सीजन में चलता है। अतः सकलदीप को बोरे मिलने में कठिनाई नहीं हुई।

खाली बोरों को नीचे पटकते हुए सकलदीप ने कहा, 'चलो भरकर तैयार कर देते हैं। रघुनाथ साह का ट्रैक्टर कर दिए हैं। रामदीन से बात हो गई है। परसों दोपहर तक धान-खरीद-केंद्र

पर पहुंचा देगा। मैं परसों ही सांझ तक लौटने का प्रयास करूंगा। यदि किसी प्रकार की कोई कठिनाई हुई तो खबर भिजवा दूंगा। सरकारी काम है, कहीं रुकना ही पड़ गया। कभी चेक बनाने वाला बाबू नहीं, तो कभी दस्तखत करने वाला साहब नहीं। बिना पहचान दरवाजा नहीं खोलना। जाड़े का समय है, सचेत रहना। सेंधमारी भी होती है।'

तीसरे दिन नियत समय पर रामदीन ने ट्रैक्टर जाकर सकलदीप के दरवाजे पर लगा दिया। सकलदीप के धान के बोरे तैयार थे। ट्रैक्टर पर धान के बोरे लादकर सकलदीप दोपहर में धान-खरीद-केंद्र पर पहुंच गया। लंबी लाइन देखकर उसका हौंसला जवाब देने लगा। तभी रामदीन बोला, 'बोरे किधर लगा दूं?

सरसरी तौर पर नजर घुमाए सकलदीप ने सड़क किनारे एक ओर बोरे उतरवाए और रामदीन को पैसा देकर छोड़ दिया। धान का नमूना लेकर वह लाइन में लगने के लिए जाने लगा, तभी दो-चार जने उसके पास आए। उनका चेहरा उसे परिचित सा लगा। उनमें से एक ने पूछा, 'धान बेचने आए हो?'

'हां।'

'कैसे बेचोगे?'

'जैसे सरकार खरीदेगी।'

'सरकार के यहां बेचने में काफी दिक्कत है।' धान के नमूना को देखते हुए दूसरे ने कहा, 'इसमें नमी बहुत है, मिट्टी भी है। सात सौ पचास तक चलेगा। दोगे तो कल नगद पैसा दिलवा देंगे। नहीं तो तुम्हारी मरजी। सरकर तो पंद्रह दिन के बाद का चेक दे रही है। वह भी एक क्विंटल पर दो किलो अधिक लेगी। कांटा कराई, चेक लिखाई और चेक पर दस्तखत करने के साहब अलग से लेंगे। आज दिन भर लाइन में लगे थक जाओगे। फिर बैंक का चक्कर। एक माह की फुरसत।'

'ठीक है। इस कीमत पर बेचना होगा तो आपको दे दूंगा।'-कहकर सकलदीप नमूने का धान लेकर लाइन में लग गया।

लाइन पैसेंजर गाड़ी की तरह धीरे-धीरे बढ़ रही थी। कोई दबंग किसान या आदमी एक्सप्रेस ट्रेन की तरह आता और लाइन में सेट हो जाता। इसी बीच सकलदीप को बीड़ी की तलब लगी। उसने बीड़ी सुलगाई। सलाई की तीली जलाते ही उन चेहरों की याद आई, जो उसके धान का मोल-तोल कर रहे थे।

सकलदीप के सामने उस दिन का स्मरण हो आया, जिस दिन धान-खरीद-केंद्र खोलने के लिए सरकार पर दबाव बनाने के लिए जिला कलेक्टर के कार्यालय के सामने धरने की अगुआई करने में आगे थे। दिन भर भूखे-प्यासे जब वह शाम को अपने घर लौटा था, तो उसे पता लगा था कि सरकार किसानों की मांग से सहमत है और जल्द ही उसके इलाके में धान-खरीद-केंद्र खुल जाएगा। आज वे ही लोग उसे डेढ़ सौ रुपए कम देकर धान लेने के लिए उतावले थे। तभी उसे लगा, उनमें से एक धान का तौल करा रहा है। उसका काम भी एक्सप्रेस गाड़ी की तरह हो रहा है। जब सकलदीप की बारी आई, तो नमूना परखने वाले बाबू ने धान की नमी की जांच कर कहा, 'धान में तो नमी है, मिट्टी भी है। प्रति क्विंटल दो किलो अधिक होगा और माल तुम्हारा कल तौला जाएगा। आज अब संभव नहीं। चेक भी एक हफ्ते बाद मिलेगा, कहते हुए बाबू अपनी कुर्सी से उठ गया।

थका-मांदा सकलदीप अपने धान के पास आया। रात गुजारने की चिंता उसे सताने लगी। बोरों को इधर उधर रख हवा का रास्ता तीन ओर से बंद कर दिया। घर से खाने के लिए भोजन बांध लिया था किंतु ओस भरे आकाश के नीचे धान की बोरियों की रखवाली उसे करनी थी। तभी दोपहर को आए व्यक्तियों में से एक आया,

'क्यों क्या हुआ? धान बेच दिया?'

'अभी नहीं। बाबू कल के लिए बोला है।

'वह ऐसे ही बोलता है। बाबू से मेरी बात हुई है। तुम्हारा धान ठीक है। आठ सौ दस का हम लगा देंगे। सुबह दस बजे तुम्हें नगद पैसा मिल जाएगा। तुम कल घर चले जाओगे। नहीं तो नौ सौ के फेर में तुम्हारा कल भी बेकार चला जाएगा। घर-परिवार के लोग तुम्हारा इंतजार कर रहे होंगे। सरकार का चेक भी दस दिन के बाद ही मिलेगा। सोच लो।'

'ठीक है, मुझे सोचने दो।'

'सोच लो।' कहते हुए वह सकलदीप के बगल में बैठ गया।

सकलदीप के सामने गेहूं की बुआई का समय गुजर रहा था। भिखारी साह को फसल के पहले लिए पैसे लौटने थे। कुछ देर बाद बुझे मन से उसने कहा, 'ठीक है तुम्हें दे दूंगा। रेट कुछ और बढ़ाओ।'

सौदा आठ सौ बीस पर तय हुआ। सुबह उस व्यक्ति ने सरकारी कांटे पर सकलदीप का धान तुलवाकर सरकार को धान सौंप चेक अपने नाम से कटवाकर ले लिया। आठ सौ बीस के हिसाब से दाम लगाकर सकलदीप को पैसा थमा दिया।

धान के पैसे लेते हुए सकलदीप को लगा,

'मेहारारू ने घर का दरवाजा तो ठीक से बंद किया था, किंतु मेरे धान में ही अस्सी रुपए प्रति क्विंटल की सेंध खुले आकाश के नीचे लग गई।'

(साभार: दैनिक जागरण)

फुलबसिया

फुलबसिया फुलबसिया
उतर गई
खेतों में
हाथों में लेकर हंसिया
फुलबसिया की काया
सांवली अमां है
चमक रहा हाथों में
किंतु चंद्रमा है
यह चंदा
दूध-भात
क्या देगा बच्चों को
लाएगा पेज और पसिया
फुलबसिया
पल्लू को खींच
कमर कांछ कर
सांय सांय काट रही
बांह को कुलांच कर
रीपर से तेज चले
सबसे आगे निकले
झुकी झुकी सी एकसंसिया
फुलबसिया खांटी है
खर खर खुद्दार है
बातों में पैनापन
आंखों में धार है
काटेगी जड़ इक दिन
बदनीयत मालिक की
बनता है भोला रसिया

-अनिरुद्ध नीरव

कृषि मानव सभ्यता का सबसे प्राचीन उत्पादक कार्य है। आज के युग में कृषिक्षेत्र केवल अनाज उत्पादन तक सीमित नहीं रह गया है। विभिन्न प्रकार की जड़ी–बूटियों, फल प्रसंस्करण, खाद्यान्न प्रसंस्करण, पुष्पोत्पादन, डेयरी, बीज उत्पादन आदि अनेक क्षेत्र कृषि व्यवसाय से जुड़े हुए हैं। इसी अवधारणा के मद्देनजर विगत लगभग एक दशक से कृषि चौपाल का अत्यल्प संसाधनों से प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें कई बार व्यवधान भी आये। हमारी कोशिश है कि कृषि चौपाल को देश के कृषकों तथा नीति–नियंताओं तक अनवरत पहुंचाया जा सके। कृषि चौपाल के प्रकाशन में किसी भी प्रकार के रचनात्मक सहयोग का हम स्वागत करते हैं।

–संपादक

RNI REGD. NO.: DELHIN/2007/20953

Designing & Printing

UNDER ONE ROOF

Kalpana Printographics is a Delhi based Designing and Printing company with healthy clients and reputation for creativity & service.

KALPANA PRINTOGRAPHICS

Call Us: +91 9910406059 E-mail: kpgdelhi@yahoo.com
Visit us on Facebook: kalpana printographics